

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182845

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 808.1 Accession No. H 3532

Author ३२५H
शास्त्री, चारुलाल इम.

Title हिन्दी छन्द रचना. 1952.

This book should be returned on or before the date
last marked below.

हिन्दी छन्द रचना

लेखक

प्योरिलाल शर्मा शास्त्री

एम. ए. (संस्कृत व हिन्दी), एम. ओ. एल.

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, द्वाबा कालिज, जालंधर

तथा आनरेरी लेक्चरर, पंजाब यूनिवर्सिटी



ओरिएण्टल लौंगमन्स लिमिटेड

कलकत्ता

बम्बई

मद्रास

ओरिएण्ट लौंगमन्स लि०

१७ चित्तरंजन एविन्यु, कलकता १३

निकोलरोड, वैलार्ड एस्टेट, बम्बई १

३६-ए माउण्ट रोड, मद्रास २

१७ नाज़िमुद्दीन रोड, ढाका

लौंगमन्स ग्रीन एण्ड कम्पनी लि०

६ और ७ क्लिफ़ोर्ड स्ट्रीट, लण्डन डब्लू १

५३१ लिट्ज़ कोलिन्स स्ट्रीट, मेलबोर्न सी १

ब्रोस्टन हाउस, स्ट्राण्ड स्ट्रीट, केपटाउन

लौंगमन्स ग्रीन एण्ड कम्पनी इन्क०

५५ फिफ्थ एविन्यु, न्यूयार्क ३

लौंगमन्स ग्रीन एण्ड कं०

२१५ विक्टोरिया स्ट्रीट, टोरन्टो १

Checked 1969

इस पुस्तक के सर्वाधिकार सुरक्षित हैं। लिखित अनुज्ञा के अतिरिक्त

इस पुस्तक के किसी भी अंश को छापना नहीं चाहिए।

प्रकाशक की अनुज्ञा प्रकाशक को लिखकर प्राप्त की

जानी चाहिए।

प्रथम संस्करण १९५२

मूँड २॥१)

भारतवर्ष में,

नवीन प्रेस, दिल्ली द्वारा मुद्रित।

विषय-सूची

भूमिका		मात्रिक और वर्णिक	
पहला अध्याय		छन्दों के भेद तथा उपभेद	२६
परिभाषा		दण्डक	३०
विषय	पृष्ठ	दूसरा अध्याय	
छन्दों की उपयोगिता	७	वर्णिक छन्द प्रकरण	
छन्दों का लक्षण	८	अनुष्टुप् जाति	३२
मात्रा	८	विद्युन्माला	३३
वर्ण	९	प्रमाणिका	३३
क्रम	९	बृहती जाति	३४
यति	१०	भुजगशशिभृता	३४
गति	११	पंक्ति जाति	३४
पाद	१३	चम्पक माला	३४
गुरु का लक्षण	१३	त्रिष्टुप् जाति	३५
लघु का लक्षण	१६	शालिनी	३५
छन्द के भेद	१८	दोधक	३५
वर्णिक गण	१९	स्वागता	३६
मात्रिक गण	२२	रथोद्धता	३७
मात्रिक और वर्णिक छन्द		भुजंगी	३७
पहचानने की रीति	२४	इन्दिरा	३८
छन्दों में मात्रा और गण		इन्द्रवज्रा	३९
लगाने की रीति	२५	उपेन्द्रवज्रा	४०

उपजाति	४१	अत्यष्टि जाति	६३
जगती जाति	४२	मन्दाक्रान्ता	६३
भुजंगप्रयात	४२	शिखरिणी	६४
प्रमिताक्षरा	४३	पृथ्वी	६६
द्रुतविलंबित	४४	धृति जाति	६७
मोदक	४५	चञ्चरी	६७
तोटक	४६	अतिधृति जाति	६८
स्रग्विणी	४७	शादूर्लविक्रीडित	६८
इन्द्रवंशा	४८	कृति जाति	६९
वंशस्थ	४८	गीतिका	६९
माधव	४९	प्रकृति जाति	७०
मोतियदाम	५०	स्रग्धरा	७०
जलोद्धतगति	५१	आकृति जाति	७१
अतिजगती जाति	५१	मदिरा	७१
तारक	१५४	मतगयन्द	७२
मञ्जुभाषिणी	५२	संस्कृति जाति	७४
राधा	५२	दुर्मिल	७४
शकरी जाति	५३	किरीट	७६
वसंततिलका	५३	अतिकृती जाति	७७
मुकुन्द	५५	सुन्दरी	७७
अतिशकरी जाति	५६	उत्कृति जाति	७८
मालिनी	५६	कुन्दलता	७८
चामर	५८	वर्णदण्डक प्रकरण	७८
निशिपालिका	५९	चण्डवृष्टि प्रपात	७९
अष्टि जाति	६०	मत्तमातङ्गलीलाकरम्	७९
पञ्चचामर	६०	कुसुमस्तवक	७९
चञ्चला	६२	मुक्तक दण्डक	८०

घनाक्षरी	८०	तैथिक जाति	६६
रूपघनाक्षरी	८२	चौबोला (अन्य नाम हंसी)	६६
जलहरण	८३	गुपाल	६७
देवघनाक्षरी	८४	जयकरी (अन्य नाम चौपाई)	६८
अर्धसमवृत्त प्रकरण	८५	संस्कारी जाति	६८
अपरक्ल	८५	चौपाई	६८
सुन्दरी	८५	पादाकुलक	१००
मंजुमाधवी	८५	पादाकुलक और चौपाई में	
विषमवृत्त प्रकरण	८६	अन्तर	१०१
सौरभक	८६	पद्धति	१०१
आपीड	८७	मत्तसमक	१०२
मिलिंदपाद	८७	पदपादाकुलक	१०२
भुजंग प्रयातमिलिंदपाद	८८	पदपादाकुलक और चौपाई में	
पञ्चचामर मिलिंदपाद	८८	अन्तर	१०३
तीसरा अध्याय		शृंगार (अन्य नाम प्रसाद)	१०३
जाति		महासंस्कारी जाति	१०५
रौद्र जाति	८८	धीर	१०५
अहीर	८८	चन्द्र	१०६
आदित्य जाति	६०	पौराणिक छन्द	१०६
तोमर	६०	शक्ति	१०६
भागवत जाति	६०	महापौराणिक छन्द	१०७
उल्लाला (अन्य नाम		सुमेरु	१०७
चन्द्रमणि)	६०	पीयूष वर्ष	१०८
मानव जाति	६१	महादैशिक छन्द	१०६
सखि	६१	हंसगति	१०६
हाकलि	६३	त्रैलोक्य जाति	११०
विजात (अन्यनाम प्रतिभा)	६५	चान्द्रायण	११०

महारौद्र	१११	लावनी	१२३
कुण्डल	१११	अश्ववतारी जाति	१२३
राधिका	१११	वीर (अन्य नाम आल्हा)	१२३
विहारी	११२	लाक्षणिक जाति	१२४
रौद्रार्क जाति	११२	त्रिमंगी	१२४
उपमान	११२	मात्रा दण्डक प्रकरण	१२५
अवतारी	११३	करखा	१२६
रोला	११३	विजया	१२६
दिकपाल	११३	हरिप्रिया	१२७
रूपमाला	११४	अर्धमम मात्रिक छन्द प्रकरण	१२७
महावतारी जाति	११५	वरवै	१२७
मुक्तामणि	११५	अतिवरवै	१२८
महाभागवत जाति	११५	दोहा	१२६
गीतिका	११५	सोरठा	१३१
नाक्षत्रिक जाति	११७	उल्लाल	१३१
सरसी (अन्य नाम कवीर)	११७	रुचिरा (द्वितीय)	१३२
यौगिक जाति	११८	मात्रिक विषम छन्द प्रकरण	१३३
हरिगीतिका	११८	कुण्डलिया	१३३
सार	११६	छप्पय	१३४
विधाता	१२०	मात्रिक मिलिदपाद	१३५
महायौगिक जाति	१२०	शृंगार मिलिदपाद	१३६
मरहटा	१२०	आर्या	१३६
महातैथिक जाति	१२१	गीति	१३७
चवपैया	१२१	उपगीति आदि अन्य	
तोटक	१२२	मुख्य भेद	१३८

चौथा अध्याय	गणों के देवता और फल	१४७
उभय छन्द तथा मुक्तक छन्द	तुक	१४८
प्रकरण	छठा अध्याय	
उभय छंद	प्रत्यय प्रकरण	
मुक्त या स्वच्छंद छंद	प्रत्यय	१४६
मुक्त छंद के दो भेदों की	मंख्या प्रत्यय	१४६
आलोचना	प्रस्तार प्रत्यय	१५१
पाँचवाँ अध्याय	नष्ट प्रत्यय	१५८
दग्धाक्षर, शुभाशुभगण तथा	उद्दिष्ट प्रत्यय	१६२
तुक प्रकरण	परिशिष्ट १	
दग्धाक्षर	(छन्द ज्ञानोपयोगी प्रश्न)	१६४
अपवाद	परिशिष्ट २	
शुभ और अशुभ गण	(उत्तर)	१७३

भूमिका

छन्दःशास्त्र के प्रथम आचार्य महर्षि पिंगल माने जाते हैं। उनका नाम इतना प्रसिद्ध हुआ कि पिंगल शब्द छन्द का ही पर्याय बन गया। जो स्थान संस्कृत-साहित्य में नाट्यसूत्रकार भरत मुनि का है, अथवा अष्टाध्यायी के सूत्र बनाने वाले पाणिनि मुनि का है वही स्थान छन्दःसूत्र बनाने वाले पिंगल मुनि का है। पिंगल मुनि के अनन्तर संस्कृत में कंदार भट्ट कृत वृत्तरत्नाकर नामक छन्दोग्रन्थ बहुत प्रसिद्ध हुआ। गंगादाम कृत छन्दोमंजरी तथा कालिदास कृत श्रुतबोध नामक छन्द के ग्रन्थ भी संस्कृत-साहित्य में आदर की दृष्टि से देखे जाते हैं। पर इनमें से जो स्थान वृत्तरत्नाकर का प्राप्त है वह अन्य दो को नहीं। इन तीनों ग्रन्थों की बड़ी विशेषता यह है कि जो पद्य या पद्यांश किसी छन्द का लक्षण बताता है वही पद्य या पद्यांश उस छन्द का उदाहरण भी होता है। इस तरह छात्रों को एक ही पद्य या पद्यांश में लक्षण और उदाहरण दोनों मिल जाते हैं। यह शैली इतनी प्रचलित हुई कि हिन्दी में भी बहुत सी छन्द की पुस्तकें इसी तरह लिखी गईं।

हिन्दी में जो छन्द-रचना हुई वह संस्कृत ग्रन्थों के आधार पर ही हुई। हिन्दी के आचार्यों में से कुछ ने हिन्दी छन्द पर जो पुस्तकें लिखी हैं उनमें से कुछ पुस्तकों के नाम, जो हमें अन्य पुस्तकों से विदित हुए हैं, नीचे उद्धृत किए जाते हैं :

मतिराम कृत

मुखदेव मिश्र कृत

छन्दसार पिंगल

वृत्तविचार

भिवारीदास कृत	छन्दार्णव
”	छन्दप्रकाश
पद्माकर भट्ट कृत	छन्दमंजरी
बलवीर कृत	पिंगल मनहरण
कुँवर गोपालमिह कृत	पिंगल प्रकाश
रसपुञ्जदास कृत	वृत्तविनोद
गोपाल भट्ट कृत	पिंगल प्रहरण
ब्रजलाल भट्ट कृत	छन्दरत्नाकर
कलाविधि कृत	वृत्तचन्द्रिका

ये ग्रन्थ पुराने हैं । इनका अब प्रचार नहीं रहा । निम्नलिखित पुस्तकें छन्द के विषय पर नवीन ढंग से लिखी हुई हैं—

जगन्नाथप्रसाद भातु कृत	छन्दःप्रभाकर
अवध उपाध्याय कृत	नवीन पिंगल
पुत्तनलाल कृत	सरल पिंगल
रामनरेश त्रिपाठी कृत	हिन्दी पद्य-रचना
राजाराम शास्त्री कृत	छन्दरत्नावली
महामहोपाध्याय पं० परमेश्वरा-	
नन्द शास्त्री कृत	छन्दःशिक्षा
परमानन्द शास्त्री कृत	पिंगल पीयूष

इसके अतिरिक्त अलंकार ग्रन्थों के परिशिष्ट के रूप में और भी बहुत से विद्वानों ने छन्द के विषय का दिग्दर्शन करवाया है, जो अपने-अपने ढंग पर बहुत अच्छा है; उदाहरण के लिए, रघुनन्दन शास्त्री कृत अलंकार-प्रवेशिका का छन्दःपरिचय, श्रीरामबहोरी कृत काव्य-प्रदीप का पिंगल-परिचय ।

अब प्रश्न हो सकता है कि इतने ग्रन्थों के होते हुए मैंने उसी विषय पर एक नया ग्रन्थ क्यों लिखा ? उत्तर सरल है । एक ही विषय को प्रतिपादित करने का ढंग सबका अपना-अपना हो सकता है । यह भी सम्भव है कि इस विषय की अन्य पुस्तकों में जो-जो त्रुटियाँ लेखक को दिखलाई दीं,

वे इस पुस्तक में न आ पाई हों। जो पुस्तक जितनी ही बोधगम्य, सुलभी हुई, पाठक के हृदय में उठने वाली शंकाओं का आप-से-आप निराकरण करने वाली होगी, इस संघर्षमय जगत् में उतनी ही वह चिरजीवी बन सकेगी—यही विचार इस पुस्तक के जन्म का कारण हुआ। समय ही बतलाएगा कि इस पुस्तक में कुछ लाभ हुआ या नहीं।

इस पुस्तक में प्रयत्न किया गया है कि उदाहरणों में वही पद्य दिये जायँ जिनमें छन्दों का लक्षण ठीक-ठीक घट जाय। टिप्पणियाँ देकर, जैसे कि इस विषय की पुस्तकों में बहुधा पाया जाता है, 'इसे गुरु पढ़ो या लघु पढ़ो' नहीं लिखा। हाँ, जहाँ ऐसे किए बिना काम चलता ही न था, वहाँ ऐसा भी किया गया है, किन्तु बहुत कम स्थानों पर। बात यह है कि हिन्दी के छन्दों में संयुक्ताक्षर से पूर्व का अक्षर संस्कृत की तरह सब जगह गुरु नहीं होता, क्योंकि उच्चारण में हम उसे जोर देकर नहीं बोलते। राम प्रसाद को हम संस्कृतभाषी की तरह रामप्रसाद नहीं कहते, रामप्रसाद कहते हैं। नियम के अनुसार म गुरु होना चाहिए, पर होता नहीं। छात्रों को भ्रम न हो जाय अतः यह बात टिप्पणी में स्पष्ट करनी पड़ती है। परिणामतः इस विषय की टिप्पणियों की संख्या बढ़ जाती है।

लक्षण को छन्द में ठीक-ठीक घटाने के लिए कहीं-कहीं उदाहरणों के पाठ में, जहाँ गुरु-लघु ठीक नहीं पड़ते थे, थोड़ा अन्तर कर दिया गया है जिससे लक्षण उदाहरण में ठीक घट जाय और छात्र को किसी प्रकार की कठिनाई का सामना न करना पड़े। टिप्पणी में मौलिक रूप भी दे दिया है। पर जहाँ परिवर्तन कर देने में अर्थ समझने में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं पड़ती वहाँ टिप्पणी में मौलिक रूप नहीं दिया गया। उदाहरण के लिए, यदि 'क्षत्रिन' के स्थान पर 'क्षत्रिन' किया गया है तो टिप्पणी में 'क्षत्रिन' नहीं दिया गया। हाँ, यदि 'ति' के स्थान पर 'ति' किया गया है तो टिप्पणी में 'ति' दे दिया गया है।

छन्दों के कुछ लक्षण, जो उन्हीं छन्दों के उदाहरण भी बन सकें, लेखक के अपने बनाये हुए हैं, जैसे १८ मात्रा वाले शक्ति छन्द, १६ मात्रा

वाले सुमेरु तथा पीयूषवर्ण छन्दों के लक्षण । यह आवश्यकता इसलिए पड़ी कि इन छन्दों के लक्षण छन्द की कई पुस्तकों में चार पादों के पूरे एक पद्य में दिये गए थे । एक छन्द के लक्षण के लिए पूरे पद्य को याद करना छात्रों के लिए कठिन समझ एक ही पाद में उनका लक्षण लिख दिया गया है ।

इस पुस्तक में एक छन्द का एक ही नाम दिया गया है । दो नाम देने से या किसी छन्द का लक्षण लिखकर 'इसे यह भी कहते हैं' लिखने से छात्रों के मस्तिष्क पर एक छन्द के दो-दो नाम स्मरण रखने का बोझ पड़ता है । पर छात्रों का ज्ञान बढ़ाने के लिए विषय-सूची में छन्दों के नाम के साथ-साथ उनके अन्य नाम भी कोष्ठकों में दे दिये गए हैं ।

उदाहरणों में जिस स्थान पर क, ख, ग आदि भाग दिये गए हैं और अन्त में जाकर किसी कवि का नाम दिया गया है वहाँ वे सब पद्य उसी कवि के बनाये हुए समझने चाहिएँ ।

प्रयत्न किया गया है कि एक छन्द के उदाहरण में एक से अधिक उदाहरण दिए जायँ ताकि छात्र अपनी रुचि के अनुसार किसी एक पद्य को कंठस्थ कर सकें ।

यह पुस्तक मुख्य रूप से छात्रों के हित को दृष्टि में रखकर लिखी गई है । पर जो लोग छन्दःशास्त्र के विषय में सामान्य ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं उनके लिए भी यह पुस्तक उपादेय है ।

हिन्दी के जो वर्तमान कवि छन्दःशास्त्र के नियमों के प्रति अवज्ञा प्रदर्शित करते हैं उनके प्रति हमारा एक विनम्र निवेदन है । वे अपनी कविताओं में छन्द के नियमों का पालन चाहे न करें पर उनका ज्ञान अवश्य प्राप्त कर लें । ज्ञान प्राप्त कर लेने के अनन्तर यदि किसी वस्तु को कोसा जाय तो कोसने वाला उतना बुरा नहीं मालूम होता जितना बिना ज्ञान प्राप्त किए किसी वस्तु को कोसने वाला । खेद है, हमारी ये कुछ पंक्तियाँ उपदेशगन्धी हो गई ।

इस पुस्तक को लिखने में लेखक ने निम्नलिखित पुस्तकों से सहायता ली है :

छन्दःप्रभाकर, छन्दरत्नावली, छन्दःशिखा, पिंगलपीयूष, अलंकार-कौमुदी, काव्यप्रदीप तथा (शास्त्री जयनारायण गौतम कृत) छन्दःशिखा-प्रदीप । लेखक इन सब पुस्तकों के रचयिताओं का ऋणी है । लेखक छन्दःप्रभाकर के सुयोग्य लेखक जगन्नाथप्रसाद भाबु का विशेष आभार मानता है और इसीलिए इस लेखक के प्रति पृथक् रूप से कृतज्ञता का प्रकाशन करता है ।

जिन कवियों के पद्य उदाहरण के रूप में इस पुस्तक में रखे गये हैं लेखक उन कवियों का अपने ऊपर ऋण स्वीकार करता है । सबसे अधिक पद्य उदाहरण के रूप में 'साकेत' से लिये गए हैं । यह ग्रन्थरत्न विविध छन्दों का आकर है । लेखक विशेष रूप से इस ग्रन्थ के रचयिता के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करता है । 'प्रियप्रवास' के रचयिता 'हरिऔध' के प्रति भी लेखक के मन में कृतज्ञता की यही भावना है ।

पुस्तक में त्रुटियों का रह जाना स्वाभाविक है । जो शिक्षक या किसी विषय में गहराई से प्रवेश करने वाले छात्र इन त्रुटियों की ओर ध्यान दिलाएँगे, लेखक उनका कृतज्ञ होगा ।

द्वारा कालेज, जालंधर

प्यारेलाल शर्मा

१४-६-५२

ओ३म् हिंदी-छंद-रचना

पहला अध्याय परिभाषा-प्रकरण

छन्दों की उपयोगिता

यह ठीक है कि कविता के लिए छन्दोमयी रचना होना आवश्यक नहीं, पर यह भी ठीक है कि कविता छन्द के नियमों में व्यवस्थित होकर अधिक आकर्षक बन जाती है। गद्यमें कही हुई एक चमत्कारपूर्ण बात को यदि हम दो बार दुहराते हैं तो पद्य में कही हुई उसी बात को हम चार बार दुहराना चाहेंगे। जिस प्रकार अपने शरीर पर फबने वाले वस्त्र पहनने से मनुष्य का सौन्दर्य निखर उठता है, वैसे ही प्रसंगानुसार भिन्न-भिन्न छन्दों का प्रयोग करने से कविता का प्रभाव बढ़ जाता है। न केवल तात्कालिक प्रभाव ही बढ़ता है, प्रत्युत ऐसी कविता की आयु भी बढ़ जाती है। यही कारण है कि छन्दों में बँधी हुई कहावतें साधारण जनता में बरसों से प्रयुक्त होती चली आ रही हैं।

कुछ लोगों का यह भी अनुभव है कि गद्यमयी रचना को कंठस्थ करने की अपेक्षा पद्यमयी रचना को कंठस्थ कर लेना अधिक सुगम है। इसलिए भी लोग पद्य को अधिक पसंद करते हैं।

यह कहना कि छन्दों के बन्धन में पड़कर कविता कुपिठत हो जाती है—कवि अपनी इच्छा के अनुसार अपने भावों को व्यक्त नहीं कर सकता—कुछ

जैचता नहीं। वाल्मीकि और कालिदास आदि कवियों ने इन्हीं बन्धनों में रहकर ऐसे सुन्दर काव्य प्रदान किये हैं जिनका सम्मान संसार के तमाम साहित्यिक करते हैं। उन्होंने कदाचित् कभी यह प्रकट नहीं किया कि उत्कृष्ट भावों की व्यक्ति के लिए छन्द उनके लिए बाधक बनते हैं। जो लोग छन्दो-बद्ध रचना को त्यागकर स्वच्छन्द रचना करने के पक्ष में यह कहकर सम्मति देते हैं कि छन्दों के बन्धन में पड़कर कवि के भाव-प्रवाह की अभिव्यक्ति में बाधा पड़ती है, उनकी बात हम तभी मान सकते हैं जब हम यह स्वीकार कर लें कि जिन लोगों ने छन्दोबद्ध रचनाएँ की हैं उनमें भाव-प्रवाह की कमी है। वाल्मीकि और कालिदास-जैसे कवियों की रचना के जीवित रहते हुए ऐसा कौन कहेगा ?

छन्दों का लक्षण

जिस रचना में मात्रा-संख्या, वर्ण-संख्या तथा इनके विशेष क्रम का और यति तथा गति के नियम का पालन करके पाद बनाए जायँ उसे छन्द कहा जाता है।

इस लक्षण में मात्रा, वर्ण, क्रम, यति, गति और पाद ये छः पारि-भाषिक शब्द आए हैं जो कि छन्दःशास्त्र के अपने हैं। पहले इन्हें समझ लेना चाहिए।

मात्रा

किसी ध्वनि के उच्चारण करने में जो काल व्यतीत होता है उस काल को मात्रा कहा जाता है। जब हम 'अ' का उच्चारण करते हैं तब हम एक मात्रा का प्रयोग करते हैं और जब 'आ' का उच्चारण करते हैं तब दो मात्राओं का। इस तरह अ इ उ ऋ आदि स्वर एक मात्रा वाले हैं, तथा आ ई ऊ ऋ आदि स्वर दो मात्रा वाले हैं। साधारण भाषा में इन्हें क्रमशः ह्रस्व और दीर्घ कह दिया जाता है।

छन्दःशास्त्र में मात्राओं की गिनती करते समय केवल स्वरों की ही

मात्राओं को गिना जाता है, व्यंजनों पर ध्यान नहीं दिया जाता। व्यंजनों के साथ जो स्वर जुड़े हुए हैं उनकी मात्राएँ गिन ली जाती हैं, स्वररहित व्यंजन छोड़ दिया जाता है। उदाहरण के लिए, 'रघुवर' में (र्+अ+घ्+उ+व्+अ+र्+अ) चार मात्राएँ ली जायँगी, 'सीतापति' में (स्+ई+त्+आ+प्+अ+त्+इ) छः और 'कदाचित्' में (क+अ+द्+आ+च्+इ+त्) चार। 'कदाचित्' में त् क्योंकि स्वररहित व्यंजन है अतः उसकी मात्रा कोई नहीं है। हाँ, यदि ह्रस्व अक्षर के आगे म् व्यंजन पड़ा है तो उसके पूर्व का अक्षर दीर्घ मान लिया जाता है, क्योंकि म् का अनुस्वार बन जाता है और अनुस्वार-युक्त व्यंजन दीर्घ होता है। इस विषय की विशेष जानकारी के लिए आगे गुरु अक्षर का लक्षण देखिए।

वर्ण

वर्ण का अर्थ है अक्षर जो एक पूरा उच्चारण होता है। अकेला स्वर भी एक पूरा अक्षर होता है और व्यंजनों से मिलकर भी स्वर अक्षर होता है। वर्णों की गिनती करते समय स्वरसहित ही व्यंजन गिने जाते हैं। स्वरहीन व्यंजन चाहे कितने हों, छन्दःशास्त्र में उनकी गिनती नहीं होती। स्वास्थ्य में यद्यपि स्+व्+आ+स्+थ्+य्+अ ५ व्यंजन हैं पर क्योंकि स्वर दो हैं अतः इसके दो ही वर्ण गिने जायँगे। वर्णों की गिनती में मात्राओं को नहीं गिनते। चाहे वर्ण ह्रस्व हो चाहे दीर्घ हो, वह एक ही गिना जायगा। 'चाचा' में दो वर्ण हैं और 'सच' में भी दो वर्ण हैं। इसी तरह मौख्य में भी दो ही वर्ण हैं। 'भारतोदय हो गया' में वर्ण-संख्या आठ है और मात्रा-संख्या बारह है।

क्रम

पाद के किस स्थान पर वर्ण ह्रस्व रखना है और किस स्थान पर दीर्घ रखना है इस स्थान-सम्बन्धी नियम को क्रम कहते हैं। कहीं-कहीं मात्रिक छन्द में भी मात्राओं का क्रम रखा जाता है। पाद के आरम्भ में ३

मात्राएँ हों, फिर दो हों तथा अन्त में दीर्घ और ह्रस्व मात्राएँ हों इत्यदि, मीमा-क्रम कहलाता है। पर वहाँ ह्रस्व और दीर्घ अन्तर रखने की आवश्यकता नहीं होती।

वर्ण-क्रम का उदाहरण देखिए—

धरणीश धनेश जनेश रहा।

इस पाद में बारह वर्ण हैं और इनका क्रम यों है—पहला-दूसरा ह्रस्व, तीसरा दीर्घ, चौथा-पाँचवाँ ह्रस्व, छठा दीर्घ, सातवाँ-आठवाँ ह्रस्व और नौवाँ दीर्घ, दसवाँ-ग्यारहवाँ ह्रस्व और बारहवाँ दीर्घ।

मात्राक्रम का उदाहरण देखिए—

पुनि भानुकुल भूषण सकल सनमान विधि समधी किये।

इस पाद में अट्ठाईस मात्राएँ हैं जिनका क्रम इस प्रकार है—

पुनि।भानु।कुलभू।षणस।कलसन।मान।विधिसम।धीकिये।

२ + ३ + ४ + ३ + ४ + ३ + ४ + ५ = २८

यति

साधारण भाषा में जिसे विश्राम या विराम कहा जाता है उसे छन्दःशास्त्र में यति कहा जाता है। पाद के अन्त में यति अवश्य रखी जाती है। जहाँ पाद लम्बे हों वहाँ उनके बीच भी यति रखी जाती है ताकि पढ़ने और समझने में सुविधा रहे। एक ही सौंस में किसी लम्बी पंक्ति का उच्चारण करना कठिन हो जाता है। पाद के बीच में कहीं एक, कहीं दो और कहीं तीन यतियां होती हैं। किस छन्द में कहाँ और कितनी यतियां होती हैं यह बात छन्दों के लक्षणों के साथ बताई जायगी। यहाँ अभी एक उदाहरण से यति का नियम समझ लेना चाहिए—

जो मैं कोई, विहग उबता, देखती ग्योम में हूँ।

इस पाद में १७ वर्ण हैं। यह मन्दाक्रान्ता छन्द है। इस छन्द में चौथे, दसवें और सत्रहवें वर्ण पर यति रखने का नियम है, जो कि ठीक-ठीक निभाया गया है। ठीक-ठीक निभाने का मतलब है कि यति पद के मध्य में यहां कहीं नहीं पड़ी, प्रत्युत पूरे पद की समाप्ति पर पड़ी है। जहाँ यति पद के मध्य में पड़े वहाँ यतिभंग दोष माना जाता है, जिस तरह निम्नलिखित पद्य में यह दोष विद्यमान है—

पुनि मन वचन क, रम रघुनायक ।

छन्दःशास्त्र की एक पुस्तक में यह पद्यांश १६ मात्रा के डिल्ला नामक मात्रिक छन्द के उदाहरण में दिया गया है। इस छन्द में आठ-आठ मात्राओं पर यति रखने का नियम है। पर ऊपर के पाद में आठवीं मात्रा 'करम' के 'क' पर समाप्त होती है, जिससे पद बीच में से टूट जाता है। इसे यतिभंग दोष कहा जाता है। यतिभंग दोष जहाँ होगा वहाँ कविता के सौन्दर्य में तो न्यूनता आएगी ही, साथ ही अर्थ समझने में भी कठिनाई होगी। कहीं कठिनाई न भी हो तो कम-से-कम अर्थ समझने में विलम्ब तो अवश्य होगा ही।

गति—

कभी-कभी ऐसा होता है कि किसी छन्द के पाद में मात्राओं या वर्णों की संख्या पूरी होती है, यति भी यथास्थान होती है, फिर भी पढ़ते समय उसमें रुकावट-सी प्रतीत होती है। दूसरे शब्दों में, उस पाद में प्रवाह नहीं होता। इसका कारण उस पाद में गति का अभाव होता है। सिद्ध कवियों की कविता में यह गति विद्यमान रहती है। गति कैसे कहाँ विद्यमान रहती है यह बात किन्हीं नियमों पर आधारित नहीं। यह बात अभ्यास पर निर्भर करती है। प्रायः ऐसा देखा गया है कि कवि जब भावावेश में होता है—जब कविता पाँदबद्ध रूप से उसके भीतर से बिना किसी प्रयत्न के स्वयं

निकलती आती है—तब ऐसी कविता में प्रवाह या गति विद्यमान रहती है । जहाँ अँगुलियों पर गिन-गिनकर मात्रा या वर्ण जोड़े जायँ वहाँ प्रायः गति का अभाव हो जाता है । नीचे के पद्यांशों में देखिए, कितना प्रवाह है—

(क) राति ना सुहात ना सुहात परभात आली ।

जब मन लागि जात काहू निरमोही सों ॥ (पद्माकर)

(ख) तारा से तरनि धूरि धारा में लगत जिमि ।

धारा पर पारा पारावार यों हलत है ॥ (भूषण)

पर इस पद्यांश को देखिए जिसमें बेचारी जीम को लड़खड़ाकर अपना रास्ता तय करना पड़ता है :

ऐसो ऊँचो दुरग महाबली को जामैं ।

नखतावली सों बहस दीपावलि करत है ॥ (भूषण)

इसमें गति का नितान्त अभाव है (यतिभंग दोष तो है ही) । ये तीनों उदाहरण ३१ वर्णों के मनहरण छन्द के हैं ।

गति का ठीक होना रचयिता के शब्द-चयन की योग्यता पर निर्भर करता है । नीचे के दोहे के एक दल को देखिए—

गोविन्द नाम जाहि में संगीत भलो जान । '

यह पढ़ा ठीक नहीं जाता । इसमें गति नहीं । अब इस दल को पढ़िए—

सीता पती न भूलिए, जौ लौं घट में प्रान । '

इसमें गति है । मात्रा-क्रम दोनों दलों में एक जैसा है, फिर भी पहले में गति नहीं दूसरे में गति है । यदि पहले दल के शब्द यों बदल दिए जायँ तो उसमें गति आ जाती है ।

गोविन्दहिं को नाम जहँ, सोई भलो संगीत । '

१. ये उदाहरण छन्दःप्रभाकर से उद्धृत किये गए हैं ।

पाद

एक छन्द को आप जितने भागों में विभक्त करें उसके एक भाग को पाद कहा जाता है। प्रायः पाद पद्य के चतुर्थ भाग के अर्थ में समझा जाता है, क्योंकि जितने भी प्रकार के छन्द प्रचलित हैं उनमें से अधिक प्रचार उनका है जिनके चार-चार अंश हैं। अतः एक अंश को पाद कह दिया जाता है। छन्द का परिमाण और सौन्दर्य ठीक रखने के लिए नियम बनाये गए हैं कि अमुक पाद में इतनी मात्राएँ या वर्ण हों और अमुक पाद में इतनी मात्राएँ या वर्ण। जिस छन्द के छः पाद होते हैं उसके छठे अंश को एक पाद कहा जायगा, जैसे कुण्डलिया या छप्पय छन्द में। पाद को चरण भी कहते हैं।

छन्द के लक्षण में जितने पारिभाषिक शब्द प्रयुक्त किये गए थे उन सबकी व्याख्या कर दी गई है। इस सम्बन्ध में अब केवल एक बात रह गई है कि जिन वर्णों को हमने ऊपर ह्रस्व या दीर्घ कहा है उनके सम्बन्ध में कुछ विशेष नियम बतला दें। एक वर्ण दीर्घ होते हुए भी कहाँ लघु माना जाता है और कहाँ लघु होते हुए भी दीर्घ माना जाता है ये बातें छन्दों को भली भाँति समझने के लिए आवश्यक हैं। छन्दःशास्त्र में ह्रस्व और दीर्घ शब्दों के लिये लघु और गुरु शब्दों का प्रयोग किया जाता है। इसलिए हम भी अब इन्हीं पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग करेंगे।

गुरु का लक्षण—

(१) आ, ई, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ, ये स्वर और इनसे मिले हुए व्यंजन गुरु होते हैं। आम, ईंट, ऊँट आदि शब्दों में पहले अक्षर गुरु हैं। ऐक्य, मौढ्य आदि शब्दों में भी प्रथमाक्षर गुरु हैं।

(२) जो वर्ण अनुस्वारयुक्त हों तथा जिनके पीछे विसर्ग लगे हों वे वर्ण भी गुरु माने जाते हैं, जैसे वंश, कंस और हंस आदि तथा दुःख, प्रातः,

अन्तःकरण आदि शब्दों के वं कं, हं, दुः, तः और न्तः अक्षर गुरु हैं ।

यहाँ इस बात को विशेष ध्यान से समझ लेना चाहिए कि अनुस्वार-युक्त लघु वर्ण ही दीर्घ होगा । अनुनासिकयुक्त लघु वर्ण दीर्घ नहीं माना जायगा । जो वर्ण मुख और नासिका दोनों स्थानों से बोले जाते हैं वे अनुनासिक होते हैं । लिखने में ऐसे अक्षरों के सिर पर चन्द्रबिन्दु लगाया जाता है जैसे हँसना, फँसना आदि शब्द । इन शब्दों में ह और फ लघु माने जायँगे । कवि लोग गुरु और लघु को ठीक बैठाने के लिए अनुस्वार की जगह अनुनासिक और अनुनासिक की जगह अनुस्वार रखकर अपना काम चला लिया करते हैं । पर ऐसा वहीं करना चाहिए जहाँ उच्चारण में भी स्पष्ट भेद हो । ध्यान से देखने पर अनुस्वार और अनुनासिक के उच्चारण में स्पष्ट भेद दिखलाई पड़ता है । नीचे के वाक्यों को देखिए—

मुझे उसकी बात पर हँसी आई ।

हंस के वियोग में हँसी इस वर्ष मीनसरोवर की तरफ नहीं उड़ी । दोनों वाक्यों के रेखांकित शब्दों के उच्चारण में स्पष्ट भेद है, अर्थ में भी भेद है । ऐसे स्थलों में छन्द की सुविधा के लिए अनुनासिक के स्थान पर अनुस्वार रखकर तथा अनुस्वार के स्थान पर अनुनासिक रखकर गुरु लघु बनाना रुचिकर प्रतीत नहीं होता ।

(३) संयुक्त अक्षर के पूर्व का वर्ण यदि लघु हो तो वह भी गुरु माना जाता है । मंतव्य, सत्य धनिष्ठ आदि शब्दों में त, स और नि ये अक्षर गुरु हैं । बात यह है कि ऐसे शब्दों का उच्चारण करते समय संयुक्त वर्ण के पहले पढ़ने वाले वर्ण पर दबाव पड़ता है अतः उसे बोलने के लिए समय अधिक लगता है जिससे एक मात्रा के स्थान पर उसकी दो मात्राएँ गिनी जाती हैं ।

(४) पाद के अन्त में पढ़ने वाले लघु अक्षर को भी आवश्यकता होने पर कभी-कभी छन्द की शुद्धि की रक्षा के लिए गुरु मान लिया जाता है और उसे पढ़ते समय थोड़ा लम्बा कर दिया जाता है, जैसे—

इच्छा न मेरी कुछ भी बनूँ मैं,

कुबेर का भी जग में कुबेर ।

यह इन्द्रवज्रा छन्द है । इसमें ११ वर्ण होते हैं । पादान्त का वर्ण गुरु होता है । पर यहाँ दूसरे चरण में पादांत का 'र' लघु है पर छन्द को शुद्ध रखने के लिए उसे गुरु मान लिया जाता है । पढ़ते समय उसे थोड़ा लम्बा कर दिया जाता है ताकि उस पर इतना समय लग जाय जितना दो मात्राओं के उच्चारण में लगता है ।

विशेष

ऊपर बताये हुए तीसरे नियम का एक अपवाद यहाँ समझ लेना चाहिए । संयुक्त अक्षर से पहले आने वाले लघु अक्षर को गुरु वहीं माना जायगा जहाँ लघु वर्ण को खींचकर पढ़ा जायगा अर्थात् उस पर दबाव पड़ेगा । जहाँ ऐसा नहीं होगा वहाँ संयुक्त वर्ण से पहले आने पर भी लघु अक्षर लघु ही रहेगा । उदाहरण के लिए तुम्हारा, कन्हैया, जुनहैया आदि शब्द लीजिए । इनके तु, क और जु लघु ही माने जाते हैं क्योंकि उच्चारण करते समय इन वर्णों पर किसी प्रकार का भार नहीं पड़ता । लिखने में संयुक्त वर्ण इन शब्दों में अवश्य प्रयुक्त हुए हैं पर बोलने में ये शब्द यों आते हैं तुमारा, कनैया, जुनैया । इसी प्रकार दोहे का यह दल पढ़िए—

चलहु प्रथम यहि ग्राम में, जल हृद अति कमनीय ।

(छन्दःशिक्षा)

इस दल में प्र, ग्रा और ह संयुक्त हैं पर क्योंकि इनके कारण इनसे पहले आने वाले हु, हि और ल अक्षरों पर किसी प्रकार का भार नहीं पड़ता अतः ये लघु ही रहते हैं ।^१

१. गुरु अक्षर की बात को समाप्त करने से पहले हम यहाँ एक और बात कहना चाहते हैं । छन्दःशास्त्र की कुछ पुस्तकों में हमने देखा है कि गुरु अक्षर के लक्षण में यह भी लिखा गया है कि ह्रस्व

यह तो हुआ गुरु वर्ण के सम्बन्ध में । अब लघु वर्ण को लीजिए ।

लघु का लक्षण

(१) अ, इ, उ, और ऋ स्वर तथा इनसे मिले व्यंजन लघु माने जाते हैं । जैसे मान, हानि, गेरु और मातृ आदि शब्दों में अन्तिम वर्ण लघु हैं ।

(२) कभी-कभी ऐसा होता है कि हम लिखने में तो किसी अक्षर को दीर्घ लिखते हैं पर पढ़ते समय उसका उच्चारण ह्रस्व की तरह करते हैं । ऐसे स्थानों में गुरु अक्षर भी लघु ही समझे जाते हैं । यह बात प्रायः ए

व्यंजन से पूर्व का लघु व्यंजन गुरु माना जाता है । उदाहरण में वहाँ सरित् तथा राजन् और भगवन् शब्द दिये गए हैं, जिनमें 'रि', 'ज' तथा 'व' गुरु माने गए हैं । हमें यह धारणा भ्रान्त प्रतीत होती है । जब तक ये शब्द स्वतन्त्र पदे हैं और किसी पाद में प्रयुक्त होकर नहीं आते, तब तक सरित्, राजन् और भगवन् में क्रमशः २, ३ और ३ ही मात्राएँ ली जायँगी । हल् व्यंजन पूर्व के लघु को गुरु नहीं बनाएगा । हाँ, जब यही शब्द किसी छन्द में प्रयुक्त होकर पाद के बीच में आ जायँगे तो अगले अक्षर के साथ संयुक्त होकर पूर्व के लघु अक्षर को गुरु बना देंगे, जैसे 'सरित्पति नहीं था टकराता' में 'रि' गुरु है । मान लीजिए सरित् शब्द कहीं पहले, दूसरे या तीसरे पाद के अन्त में आता है तो उसका 'त्' दूसरे, तीसरे या चौथे पाद के प्रथमाक्षर से संयुक्त होकर 'रि' को गुरु बना देगा । यदि वह चौथे पाद के अन्त में आता है तो वहाँ 'रि' गुरु नहीं मानी जायगी, लघु ही रहेगी, जैसे, यदि किसी पद्य का ऐसा चौथा पाद हो

बरसो, भर दो, नद सरसी सरित् ।

इसमें सोलह मात्राएँ हैं । आठ-आठ पर यति है । अन्त के तीन अक्षर (त् हल् होने के कारण नहीं गिना जायगा) क्रमशः गुरु, लघु और लघु हैं । जिसमें यह लक्षण मिले वह छिन्ना नामक मात्रिक छन्द होता है । अब यदि 'त्' के कारण 'रि' को दीर्घत्व प्राप्त हो जायगा तो

और ओ अक्षरों के साथ अधिक होती है। उदाहरण देखिए—

(१) गोरस जेहु गोपाल ।

(२) देहु देवावहु गारि ।

ये दोनों अवतरण भिन्न-भिन्न दोहों के चौथे-चौथे चरण हैं। दोहे के चौथे चरण में ग्यारह मात्राएँ होती हैं पर यहाँ १२-१२ हैं। मात्राएँ ग्यारह ही रहें इसलिए 'गोपाल' के 'गो' को 'गु' करके तथा 'देवावहु' के 'दे' को 'दि'

यहाँ डिल्ला छन्द बनने में बाधा होगी। हाँ, जहाँ हमने छन्द को ठीक रखने के लिए अन्त में गुरु लाना ही है वहाँ हम छन्द के अन्त में पड़ी हुई होने के कारण (तू तो गिना नहीं जायगा) 'रि' को ऊपर लिखे नियम संख्या ४ के अनुसार गुरु मान लेंगे। जहाँ म् हल् हो, उसके पूर्व का जघु गुरु हो सकता है, क्योंकि म् अनुस्वार में बदल जाता है। अतः अनुस्वारयुक्त होने से जघु वर्ण को गुरुत्व प्राप्त हो जाता है। इस विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह धारणा कि जघु वर्ण के पीछे यदि कोई हल् हो तो वह जघु वर्ण गुरु हो जाता है, भ्रान्त है तथा ऊपर दिये हुए गुरु-सम्बन्धी तीसरे और चौथे नियम को अच्छी तरह से न समझने का फल है। छन्दःशास्त्र के पण्डित आदरणीय भानु कवि जी ने भी अपने छन्दःप्रभाकर में इस भ्रान्त धारणा को पुष्टि दी है। उन्होंने कहा है, 'गुरु वर्ण के पश्चात् हल् की अलग मात्रा नहीं ली जाती। जैसे भवेत्, यहाँ तू की अलग मात्रा न मानी जायगी, परन्तु जघु वर्ण के पश्चात् कोई हल् हो तो वह जघु वर्ण गुरु माना जायगा। यथा मात्रकम्, यहाँ जघु वर्ण 'क' के पश्चात् म् हल् है तो 'क' को गुरुत्व प्राप्त हो जाता है।'।

भानु जी ने जैसे भवेत् उदाहरण दिया है वैसे ही उदाहरण यदि वह दूसरी बात के उदाहरण में भी देते तो बात साफ हो जाती। मात्रकम् में तो जो 'क' को गुरुत्व प्राप्त हुआ है उसका कारण तो म् का अनुस्वार बन जाना है। प्रश्न यह है कि 'अभवत्' में 'व' गुरु है या

करके पढ़ा जाता है ।

छन्दःशास्त्र में गुरु लघु को लिखने के लिये विशेष प्रकार के चिह्न नियत किये हुए हैं । गुरु को टेढ़ी रेखा (ऽ) से और लघु को सीधी रेखा (।) से व्यक्त किया जाता है ।

छन्द के भेद

छन्द दो प्रकार के होते हैं—एक वर्णिक छन्द, दूसरे मात्रिक छन्द । वर्णिक छन्दों को साधारणतया वृत्त भी कहा जाता है । मात्रिक छन्दों का दूसरा नाम जाति भी है ।

जिन छन्दों में गुरु लघु का स्थान, वर्णों की संख्या तथा यति का स्थान नियत होता है वे वर्णिक छन्द होते हैं ।

जहाँ मात्राओं की संख्या तथा कहीं-कहीं मात्रा-क्रम और यति का स्थान नियत होता है वहाँ मात्रिक छन्द होता है ।

कहाँ कौन वर्ण लघु है और कौन वर्ण गुरु है इस बात को समझने-
नहीं ? भानु कवि जी के अनुसार उसे गुरु होना चाहिए, क्योंकि वह हल् से पहले पड़ा है । पर हम समझते हैं कि उसकी तीन ही मात्राएँ हैं, चार नहीं । अच्छा होता, यदि इस धारणा को मानने वाले अपनी धारणा की पुष्टि में किसी प्रमाण को उद्धृत करते ।

सैद्धांतिक रूप से हमने ऊपर विवेचना कर तो दी है पर वास्तविक रूप में देखें तो कहना पड़ेगा कि हिन्दी भाषा की ऐसी प्रकृति ही नहीं कि वह हलन्त शब्दों का प्रयोग करे । हिन्दी के कवि प्रायः हलन्त संस्कृत शब्दों को अदन्त बनाकर लिखते हैं, जैसे भगवन् को भगवन । निम्नलिखित उदाहरण देखिए—

सब साधन से रहे समुन्नत, भगवन देश हमारा ।

यह अट्टाईस मात्राओं के सार छन्द का चरण है जिसमें भगवन् को भगवन लिखा गया है ।

समझाने के लिए छन्दःशास्त्र के पण्डितों ने गणों की कल्पना की है। उन्होंने वर्ण छन्दों में तीन-तीन अक्षरों का एक गण माना है। गणों के नाम निम्नलिखित हैं—

मगण, नगण, भगण, यगण, रगण, जगण, सगण और तगण।

इनके साथ दो अक्षर ग और ल और जोड़ दिये जाते हैं जो गुरु लघु के वाचक हैं। छन्दःशास्त्र के इन दस अक्षरों में समग्र वाङ्मय का समावेश हो जाता है। इन्हें पिंगल के दस अक्षर कहा जाता है।

यदि तीनों अक्षर गुरु (SSS) हों तो मगण होता है। यदि तीनों अक्षर लघु (lll) हों तो नगण होता है। यदि पहला अक्षर गुरु और अन्तिम दो लघु (Sl) हों तो भगण होता है। यदि पहला अक्षर लघु हो और अन्तिम दो गुरु (lSS) हों तो यगण होता है। यदि पहला अक्षर गुरु, दूसरा लघु और तीसरा फिर गुरु (SlS) हों तो रगण होता है। यदि पहला अक्षर लघु, दूसरा गुरु, तीसरा फिर लघु (lSl) हों तो जगण होता है। यदि पहले दो लघु और तीसरा गुरु (llS) हो तो सगण होता है। यदि पहले दो गुरु और तीसरा लघु (SSl) हों तो तगण होता है।

छन्दःशास्त्र में इन्हें मगण, नगण, भगण इत्यादि कहने के स्थान पर केवल पूर्व-पूर्व अक्षर से कह दिया जाता है, जैसे म, न, भ इत्यादि।

नीचे हम ऐसी तालिका देते हैं जिससे गणों के नाम, लक्षण, चिह्न और उदाहरण जाने जा सकते हैं ।

नाम	अक्षर	लक्षण	चिह्न	उदाहरण	
मगण	म	सर्व गुरु	sss	माता का	विशेष — यह आवश्यक नहीं कि एक गण में एक शब्द या पद पूरा हो जाय । कहीं एक गण में शब्द या पद पूरा हो भी जाता है कहीं नहीं भी पूरा होता: जैसे—दिवस का अवसाल समीप था । इस पाद में दिवस । का अत्र । सानस । मीप था । इसमें क्रमशः नगण, भगण, मगण और रागण हैं । पहला शब्द पूरा है बाकी एक-दूसरे के साथ मिले हुए हैं ।
नगण	न	सर्व लघु		कमल	
भगण	भ	आदि गुरु	sa	रावण	
यगण	य	आदि लघु	lss	कवीरा	
रगण	र	मध्य लघु	sls	जानता	
जगण	ज	मध्य गुरु	sl	रमेश	
सगण	स	अन्त गुरु	lls	कमला	
तगण	त	अन्त लघु	ssl	योगेश	
लघु	ल	अकेला लघु		ल	
गुरु	ग	अकेला गुरु	s	गो	

गणों के लक्षण सुगमता से याद रखने के लिए छन्दःशास्त्रियों ने कई सूत्र या पद्य बनाये हुए हैं । एक सूत्र यह है—

यमाताराजभानसङ्गं ।

इसमें प्रथम आठ अक्षर तो गणों के नाम हैं अन्त में लघु और गुरु

हैं। उदाहरण के लिए यदि आपने यगण का लक्षण देखना हो तो य के साथ अगले दो अक्षर और मिला दीजिए तो यमाता बन जाएगा जो यगण का उदाहरण है। मगण का लक्षण जानना हो तो म के आगे के दो अक्षर और गिन लीजिए इस तरह मातरा बन जायगा जो मगण का उदाहरण है। इसी प्रकार यदि सगण का लक्षण देखना हो तो सलग देख लीजिए।

निम्नलिखित पद्य भी छन्दःशास्त्र की कई पुस्तकों में दिया गया है—

आदि मध्य अवसान में, भ ज स सदा गुरु मान।

क्रम से होते य र त लघु, म न गुरु लघु त्रय जान ॥

अर्थात् क्रम से आदि गुरु भगण मध्य गुरु जगण अन्त गुरु सगण होता है। इसी तरह क्रम से आदि लघु यगण मध्य लघु रगण और अन्त लघु तगण होता है। मगण में तीनों गुरु और नगण में तीनों लघु होते हैं।

इस विषय का संस्कृत का एक पद्य बड़ा ही प्रवाहपूर्ण है। थोड़ी-सी भी संस्कृत जानने वाले छात्र इसे सुगमता से कंठस्थ कर सकते हैं और इसका अर्थ समझ सकते हैं।

मस्त्रिगुरुस्त्रिलघुश्च नकारो

भादिगुरुः पुनरादिर्लघुर्यः।

जो गुरुमध्यगतो रत्नमध्यः

सोऽन्तगुरुः कथितोऽन्तलघुस्तः।

इस श्लोक का अन्वय यों है—

त्रिगुरुः मः। नकारः च त्रिलघुः। आदि गुरुः भ। पुनः आदि लघुः यः। गुरुमध्यगतः जः। लमध्यः र। अन्तगुरुः सः। अन्तलघुः तः कथितः।

अर्थात् जिसमें तीनों गुरु हों वह मगण, जिसमें तीनों लघु हों वह नगण, जिसके आदि में गुरु हो वह भगण, जिसके आदि में लघु हो वह यगण, गुरु जिसके मध्य में हो वह जगण, लघु जिसके मध्य में हो वह रगण, गुरु जिसके अन्त में हो वह सगण और लघु जिसके अन्त में हो वह तगण होता है।

मात्रिक गण .

मात्रिक गण चार-चार मात्राओं का होता है। चार-चार मात्रा वाले मात्रिक गणों के पाँच रूप होते हैं। पहले रूप में दो गुरु (५५), दूसरे में दो लघु एक गुरु (॥५), तीसरे में एक लघु एक गुरु फिर एक लघु (।५), चौथे में एक गुरु और दो लघु (५॥), और पाँचवें में चारों लघु (॥॥॥) होते हैं। इन्हें चतुष्कल या चौकल कहते हैं क्योंकि इनमें चार-चार कला अर्थात् मात्राएँ हैं।

तीन-तीन वर्ण वाले वर्ण-गणों के जिस प्रकार नाम रक्खे हुए हैं वैसे ही चार-चार मात्रा वाले इन मात्रिक गणों के भी प्राचीन छन्दःशास्त्रियों ने नाम रक्खे हैं परन्तु वह नाम व्यवहार में नहीं आते। ऊपर जो पाँच मात्रिक गण बताये गए हैं उनमें से ये तीन रूप तो ॥५, ।५ और ५॥ क्रमशः वर्णिक गणों के सगण, जगण और भगण के समान ही हैं। अतः छन्दःशास्त्र के पण्डित उन्हीं नामों से इन गणों का भी नाम लेकर काम चला लेते हैं।

वैसे छन्दःशास्त्र की पुस्तकों में इन गणों के ये नाम दिये हुए हैं—
कर्ण (५५), करतल (॥५), मुरारि, पयोध (।५), वसु, चरण (५॥), और विप्र, द्विज (॥॥॥)।

नीचे हम एक तालिका देते हैं जिससे इन गणों का स्वरूप, लक्षण, उदाहरण और नाम स्पष्ट हो जायेंगे ।

स्वरूप	लक्षण	उदाहरण	नाम
५ ५	सर्वगुरु	माता	कर्ण
॥ ५	अन्तगुरु	रजनी	करतल
॥ ५ ॥	मध्यगुरु	कुणाल	मुरारि, पयोध
५ ॥ ॥	आदिगुरु	पालक	वसु, चरण
॥ ॥ ॥ ॥	सर्वलघु	नरपति	विप्र, द्विज

यह चतुष्कल प्रायः आर्या छन्द में व्यवहृत होते हैं ।

मात्रा को कल के अतिरिक्त मत्ता और मत्त भी कहते हैं ।^१

१. वास्तव में हमने यहाँ मात्रिक गणों के सारे भेद नहीं लिखे । हमने केवल डगण नामक मात्रिक गण के पाँच उपभेद लिखे हैं । जिन्हें जिज्ञासा हो वे मात्रिक गणों के टगण, ठगण, डगण, ढगण, शगण गणों को छन्दःप्रभाकर में देखें ।

मात्रिक छन्द और वर्णिक छन्द पहचानने की रीति

मान लीजिए आपके मन में जिज्ञासा पैदा होती है कि निम्नलिखित पद्य में मात्रिक छन्द है या वर्णिक ।

	मात्रा	वर्ण
उच्छ्वास और आँसू में	१४	८
विश्राम थका सोता है ।	१४	८
रोई आँखों में निद्रा	१४	७
बनकर सपना होता है ।	१४	१०

यह उदाहरण मात्रिक सम छन्द का है क्योंकि इसके चारों चरणों में मात्राओं की संख्या तो समान है परन्तु वर्णों का क्रम चारों पादों का एक समान नहीं ।

अब वर्णवृत्त को लीजिए

	वर्ण
अपने हिमबिन्दु बचे तब भी,	१२
खलता उनको धरता-धरता ।	१२
गड़ जायँ न कण्टक भूतल के,	१२
कर डाल रहा डरता-डरता ।	१२

(मैथिलीशरण गुप्त)

यह वर्णवृत्त का उदाहरण है । इसके चारों चरणों में वर्ण संख्या और वर्णक्रम समान हैं । प्रत्येक पाद में चार-चार सगण हैं अतः यह वर्णिक छन्द है ।

सारांश यह है कि मात्रिक छन्द के चारों पादों में मात्रा संख्या तो समान होती है पर चारों पादों में गुरु लघु का स्थान नियत नहीं होता । वहाँ तो मात्राओं की गिनती पूरी करनी होती है । वर्णिक वृत्तों में वर्णसंख्या चारों पादों में समान होने के साथ-ही-साथ वर्णक्रम—अर्थात् गुरु लघु अक्षर का स्थान—भी समान होता है ।

वर्णिक और मात्रिक छन्द का भेदक लक्षण वर्णक्रम का एक में होना

तीन-तीन अक्षरों के ऊपर एक रेखा खींच दो जिससे वे तीन-तीन अक्षर एक-एक गण बनाते चलें। रेखा के ऊपर गण का नाम लिख दो यदि एक या दो अक्षर बच जायें तो वे गुरु हों तो ग, लघु हों तो ल लिख दें, दोनों गुरु हों तो ग, ग लिख दें, दोनों लघु हों तो ल, ल।

उदाहरण देखिए—

त	भ	ज	ज	ग	ग
५ ५	५ । ।	। ५ ।	। ५ ।	५	५
आँखों अ नू पछ	वि है जि स नेवि	लो	की		
त	भ	ज	ज	ग	ग
५ ५ ।	५ । ।	। ५ ।	। ५ ।	५	५
वंशी-निनादम	न दे जि स ने सु	ना	है ।		
त	भ	ज	ज	ग	ग
५ ५ ।	५ । ।	। ५ ।	। ५ ।	५	५
देखा बि हा र ह	स या मि नि में जि	न्हों	ने		
त	भ	ज	ज	ग	ग
५ ५ ।	५ । ।	। ५ ।	। ५ ।	५	५
कैसे सु कुं द उ	न के उ र से क	दें	गे ॥		

(तीसरे पाद में 'जिन्होंने' पद में 'जि' लघु है, क्योंकि 'ह' संयुक्त वर्ण होने पर भी 'जि' पर बल नहीं डालता। बोलने में 'जिन्होंने' ऐसा कहा जाता है।)

यह चौदह वर्णों का बसंत तिलका छन्द है

मात्रिक और वर्णिक छन्दों के भेद

मात्रिक और वर्णिक छन्द तीन प्रकार के होते हैं :

सम, अर्धसम और विषम

जिसके चारों पाद एक समान हों अर्थात् मात्राओं की संख्या एक जैसी हो अथवा वर्णिक क्रम और संख्या एक समान हो उसे सम छन्द कहते हैं।

जिसमें पहला पाद तीसरे के साथ और दूसरा चौथे के साथ मिलता हो उस छन्द को अर्धसम कहते हैं ।

जिसमें न सम का और न अर्धसम का लक्षण मिलता हो उसे विषम छन्द कहते हैं । इस भेद में ऐसे सभी पद्य आ जाएँगे कि (१) जिनके चारों पाद एक दूसरे से भिन्न हो सकते हैं अथवा (२) पहला दूसरे के साथ और तीसरा चौथे पाद के समान हो सकता है अथवा (३) दो चरण आपस में मिलते हों शेष दो एक दूसरे से भिन्न हों । वे सब पद्य भी इसी विषम छन्द के अन्तर्गत आ जाते हैं जिनके पाद चार से न्यून या अधिक हों ।

अब हम नीचे क्रमशः इनके उदाहरण देते हैं—

सम मात्रिक छन्द का उदाहरण—

मात्रा

उड़ाती है तू घर में कीच, १६
नीचही होते हैं बस नीच । १६
हमारे आपस के व्यवहार, १६
कहाँ से समझे तू अनुदार । १६ (साकेत)

इसके चारों पादों में मात्रा संख्या समान है । यह शृंगार नामक सम मात्रिक छन्द है ।

मात्रिक अर्धसम का उदाहरण—

अरी सुरभि जा, लौट जा,
अपने अंग सहेज ।

तू है फूलों में पत्नी, /
यह काँटों की सेज ॥

इसके पहले और तीसरे तथा दूसरे और चौथे पाद परस्पर समान हैं । विषम पादों में अर्थात् पहले और तीसरे में १३-१३ तथा दूसरे और चौथे में ११-११ मात्राएँ हैं ।

मात्रिक विषम छन्द का उदाहरण—

रहिये लटपट काट दिन, वरु घामें माँ सोय ।
 छाँह न बाकी बैठिए, जो तरु पतरो होय ॥
 जो तरु पतरो होय, एक दिन धोखा देहै ।
 जा दिन बहे बवार, टूटि तथ जर से जैहैं ॥
 कह गिरधर कविराय, छाँह मोटे की गहिये ।
 पत्ता सब करि जाय, तऊ छाया में रहिये ॥

इस पद्य में चार से अधिक पाद हैं अतः यह विषम छन्द है ।

वर्णिक सम छन्द का उदाहरण

वर्ण

मैं जो नया ग्रन्थ विलोकता हूँ ११
 भाता मुझे खो बब मित्र सा है । ११
 देखूँ उसे मैं निव बार-बार ११
 मानों मिला मित्र मुझे पुराना ॥ ११

इसके चारों पादों में वर्ण क्रम और वर्ण संख्या समान है । यह इन्द्रवज्र छन्द है ।

वर्णिक अर्धसम वृत्त का उदाहरण—

वर्ण

अब भी वह चाटिका वहाँ १०
 पर बैठै यह ऊमिछा यहाँ । ११
 करुणाकृति माँ बिसूरती १०
 गिरिजा भी बन मूर्ति धूरती । ११

इस पद्य के पहले और तीसरे पाद में तथा दूसरे और चौथे पाद में वर्ण संख्या और वर्ण क्रम समान है । यह सुन्दरी छन्द है ।

वर्णिक विषम वृत्त का उदाहरण—

वर्ण

सब त्यागिये असत काम । १०

शरण गहिण सदा हरी ॥ १०

सर्व सूख भव जायँ टरी । १०

भजिये अहो निशि हरी हरी हरी ॥ १३

इसके चारों पादों में वर्ण क्रम समान नहीं । यह सौरभक नामक विषम वृत्त है ।

सम नामक भेद के उपभेद

ऊपर हमने जो मात्रिक और वर्णिक छन्दों के तीन-तीन भेद बतलाए हैं उनमें से सम नामक भेद के दो-दो उपभेद और हैं जो हम क्रमशः नीचे देते हैं—

वर्णसमवृत्त के उपभेद

वर्ण समवृत्त दो प्रकार का होता है—साधारण समवृत्त और दण्डक । साधारण समवृत्त एक वर्ण से लेकर छब्बीस वर्ण तक अर्थात् एक अक्षर के एक-एक पाद से लेकर २६ अक्षरों के एक-एक पाद तक होता है । जिस पद्य में एक-एक वर्ण के चार पाद हों वह पद्य एकाक्षर वृत्त जिसमें दो-दो वर्णों के चार पाद हों वह द्व्यक्षर वृत्त कहलाएगा । इस प्रकार छब्बीस अक्षर तक के एक-एक पाद वाले वर्ण समवृत्त की छब्बीस जातियाँ होती हैं । इन छब्बीस जातियों के क्रमशः निम्नलिखित नाम हैं—

(१) उक्ता (२) अन्त्युक्ता (३) मध्या (४) प्रतिष्ठा (५) सुप्रतिष्ठा (६) गायत्री (७) उष्णिक् (८) अनुष्टुप् (९) बृहती (१०) पंक्ति (११) त्रिष्टुप् (१२) जगती (१३) अतिजगती (१४) शक्वरी (१५) अतिशक्वरी (१६)

अष्टि (१७) अत्यष्टि (१८) धृति (१९) अतिधृति (२०) कृति (२१) प्रकृति (२२) आकृति (२३) विकृति (२४) संकृति (२५) अतिकृति (२६) उत्कृति ।

इनमें से एक-एक के अनेक भेद होते हैं, जिनके निकालने की विधि हम अन्तिम अध्याय में बतलाएँगे ।

दण्डक

जिन पद्यों में छन्दोस अक्षरों से अधिक अक्षर एक-एक पाद में हों वे पद्य दण्डक कहलाते हैं ।

मात्रिक सम छन्द के उपभेद

मात्रिक सम छन्द भी दो प्रकार का ही होता है—साधारण और दण्डक ।

साधारण मात्रिक सम छन्द में एक मात्रा से लेकर ३२ मात्राओं तक के पाद एक पद्य में हो सकते हैं । जिस प्रकार वर्ण समवृत्त में २६ जातियों के पृथक्-पृथक् नाम हैं उसी प्रकार सममात्रिक छन्दों की इन बत्तीस जातियों के भी पृथक्-पृथक् नाम हैं, जो नीचे लिखे जाते हैं—

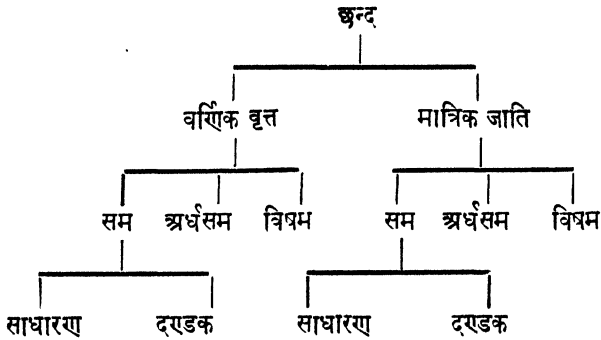
(१) चान्द्र (२) पाक्षिक (३) राम (४) वैदिक (५) याज्ञिक (६) रागी (७) लौकिक (८) वासव (९) अंक (१०) दैशिक (११) रौद्र (१२) आदित्य (१३) भागवत (१४) मानव (१५) तैथिक (१६) संस्कारी (१७) महा-संस्कारी (१८) पौराणिक (१९) महापौराणिक (२०) महादैशिक (२१) त्रैलोक्य (२२) महारौद्र (२३) बौद्धार्क (२४) अवतारी (२५) महावतारी (२६) महाभागवत (२७) नाक्षत्रिक (२८) यौगिक (२९) महायौगिक (३०) महातैथिक (३१) अश्वावतारी (३२) लाक्षणिक ।

ये सब नाम मात्राओं की संख्याओं के अनुसार रखे हुए हैं । जैसे, जिसमें १८ मात्राएँ हों उसे पौराणिक जाति कहेंगे, क्योंकि पुराण १८ हैं, जिसमें चार मात्राएँ हों वह वैदिक जाति कहलायगी क्योंकि वेद चार हैं ।

दण्डक

जिन पद्यों के एक-एक पाद में ३२ मात्राओं से अधिक मात्राएँ हों वे मात्रिक दण्डक होते हैं।

नीचे दिये हुए वंशवृत्त से ये भेद स्पष्ट हो जायेंगे :



दूसरा अध्याय

वार्णिक छन्द प्रकरणा

पिछले अध्याय में हमने वर्णवृत्तों के सम अर्धसम और विषम नामक जो तीन भेद बतलाये हैं इस अध्याय में हम क्रमशः उनके लक्षण और उदाहरण लिखेंगे ।

एक से सात अक्षरों तक के छन्दों के लक्षण और उदाहरण हमने छोड़ दिये हैं, क्योंकि अल्पाक्षर होने के कारण उनका प्रयोग बहुत कम होता है । हम आठ अक्षर वाले छन्द तथा उससे आगे के छन्दों के लक्षण और उदाहरण यहाँ दे रहे हैं । जैसे पहले कहा है, एक-एक जाति में कई उपभेद हो सकते हैं, पर हमने मुख्य-मुख्य उपभेदों को ही लिया है । किसी जाति के जितने उपभेद हो सकते हैं हमने उसी के सामने कोष्ठक में वे दे दिये हैं ।

अनुष्टुभ् जाति

आठ अक्षरों वाले छन्द (२५६)

अनुष्टुभ् अथवा श्लोक

इस छन्द के प्रत्येक पाद में आठ अक्षर होते हैं । ५ वाँ अक्षर लघु होता है और छठा अक्षर गुरु । दूसरे और चौथे पाद में सातवाँ अक्षर भी लघु होता है ।

उदाहरण—

सखी ने अंक में खींचा,
दुःखिनी पद सो रही ।
रवप्न में हँसती थी हा !
सखी थी देख रो रही । (साकेत)

अथवा

स्वस्तिवाद विरक्तों का
 और ही कुछ वस्तु है ।
 वाक्यों में उनको होता,
 ईश का एवमस्तु है । (अलंकार प्रवेशिका)

विद्युन्माला

मो मो गो गो विद्युन्माला ।
 इसमें मगण, मगण गुरु और गुरु के क्रम से प्रत्येक पाद में आठ
 अक्षर होते हैं । जैसे—

मेरी माता, तेरा द्वारा ।
 काटे फंदा मेरा सारा ॥
 होती तेरी सच्ची वाणी ।
 ब्रह्मा जी की है तू रानी ॥ (प्यारेलाज शर्मा)

प्रमाणिका

प्रमाणिका जरौ लगौ ।
 प्रमाणिका में जगण, रगण, लघु और गुरु के क्रम से आठ अक्षर होते
 हैं । जैसे—

स्वदेश के महर्षि का ।
 स्वराज के सुतराव का ।
 विवेक बार-बार हो ।
 अनेकधा विचार हो । (शंकर)

बृहती जाति
नौ अक्षरों के छन्द (५१२)

भुजगशशिभृता

भुजगशशिभृता नन्मा ।

इस छन्द में दो नगण और एक मगण के क्रम से नौ अक्षर होते हैं । जैसे—

प्रिय सुख-दुख है सारा
जनम मरण भी प्यारा ।
हम इस जग को भावें
यह हम तज ना पावें । (प्यारेलाल शर्मा)

अथवा

दुख पर दुख भी पाओ
पर सतपथ ही जाओ ।
भवभय हर को ध्याओ
अनत न चित ले जाओ ॥

(छंदःशिक्षा)

पंक्ति जाति
दस अक्षरों के छन्द (१०२४)

चम्पकमाला

चम्पकमाला है भमसागा । (यति ५,५)

इस छन्द में भगण, मगण, सगण और गुरु के क्रम से दस अक्षर होते हैं । जैसे—

शान्ति नहीं तो, जीवन क्या है ?
 काम्ति नहीं तो, यौवन क्या है ?
 प्रेम नहीं तो, आदर क्या है ?
 प्यास नहीं तो, सागर क्या है ? (रामनरेश त्रिपाठी)¹

त्रिष्टुप् जाति

ग्यारह अक्षरों के छन्द (२०४८)

शालिनी

मा ता ता गा गा युता 'शालिनी' है । (यति ४,७)

इस छन्द में मगण, तगण, तगण और दो गुरु के क्रम से ग्यारह अक्षर होते हैं, जैसे—

कैसी-कैसी, ठोकरें खा रहा है ।
 तीखी पीड़ा, चित्त में पा रहा है ।
 तो भी प्यारे, हाल तेरा वही है ।
 विद्वानों की, पद्धति क्या यही है । (छन्दःशिक्षा)

या

क्या-क्या होगा साथ, मैं क्या बताऊँ ?
 है ही क्या, हा, आज जो मैं जताऊँ ?
 तो भी तूली, पुस्तिका और वीणा,
 चौथी मैं हूँ, पाँचवीं तू प्रवीणा । (साकेत)

दोधक

दोधक तीन भकार गुरु दो ।

दोधक छन्द में तीन भगण और दो गुरु के क्रम से ग्यारह अक्षर होते हैं । जैसे—

१. 'क्या' का पूर्वार्ध पर दबाव नहीं पड़ता ।

(क) मैं जग में सबते बड़भागी ।
 देह दशा तब कारण लागी ।
 जो बहु भाँतिन वेदन गायो ।
 रूप सु मैं अबलोकन पायो ।

अथवा

(ख) पांडव की प्रतिमा सम लेखो
 अर्जुन भीम महामति देखो ।
 है सुभगा सम दीपति पूरी
 सिन्दुर औतिलकावलि रूरी ।

अथवा

(ग) आरत की प्रभु आरति टारौ
 दीन अनाथन को प्रभु पारौ ।
 थावर जंगम जीव जु कोऊ ।
 संमुख होत कृतारथ सोऊ । (रामचन्द्रिका)

स्वागता

स्वागता रनभगैगुरुणा च ।

स्वागता छन्द में रगण, नगण, भगण और दो गुरु के क्रम से ग्यारह अक्षर होते हैं । जैसे—

(क) राज पुत्रिकनि सों छवि छाये
 राजराज सब डेरहि आये ।
 हीर चीर गज बाजि लुटाए
 सुन्दरीन बहु मंगल गाए ।

अथवा

(ख) देखि राम वरषा ऋतु आई ।
 रोम रोम बहुधा दुखदाई ।

आसपास तम की छवि छाई ।
राति द्यौस^१ कछु जानि न जाई ।

अथवा

(ग) पद्मगारि तबहीं तहँ आये ।
काल-जाल सब मारि भगाये ।
लंकमाँझ तबहीं गइ सीता ।
सुप्रदेह अबलोकि सुगीता । (रामचन्द्रिका)

रथोद्धता

रानरालग कहैं रथोद्धता

रथोद्धता छन्द में रगण, नगण, रगण और लघु गुरु के क्रम से ग्यारह
अक्षर होते हैं । जैसे—

बात तोलकर सर्वदा कहो ।
सावधान खल से सदा रहो ।
अन्त सोच तब धार में बहो ।
हानि ग्लानि सब धैर्य से सहो । (छन्द रत्नावली)

अथवा

चित्रकूट तब राम जू तजो ।
जाय यज्ञधन अग्नि को भजो ।
राम लक्ष्मण समेत देखियो ।
आपनो सफल जन्म लेखियो । (रामचन्द्रिका)

भुजंगी

त्रि या औ ल गा सौं भुजंगी रचौ ।

१. द्यौ पूर्वाक्षर पर दबाव नहीं डालता ।

भुजंगी छन्द में तीन यगण और लघु गुरु के क्रम से ग्यारह अक्षर होते हैं। जैसे—

(क) इसी भाँति आलाप संलाप में,
न ऐसे महाशाप में ताप में।
हमारा यहाँ काल था बीतता।
न संतोष का कोष था रीतता।

या

(ख) हरे, हाय, क्या^१ से यहाँ क्या हुआ।
उड़ा हो दिया मन्थरा ने सुआ।
हिया-पीजरा शून्य माँ को मिला।
गया सिद्ध मेरा रही मैं शिला।

अथवा

(ग) सखी सख्य क्या^१ मैं घुली जा रही ?
मिलूँ चाँदनी में, बुरा क्या यही ?
नहीं चाहते किन्तु वे चाँदनी,
तपोमग्न हैं आज मेरे धनी। (साकेत)

इन्दिरा

नररत्नाग सों 'इन्दिरा' सजै। (यति ६,५)

इन्दिरा छन्द में नगण, रगण, रगण और लघु गुरु के क्रम से ग्यारह अक्षर होते हैं। जैसे—

फिर हुई अहा, मत्त ऊर्मिला,
सखि,^१ प्रियस्व था, क्या मुझे मिला।
यह वियोग वा, रोग, जो कहें,
प्रियमयी सदा, ऊर्मिला रहे।

अथवा

(ख) धिक् तथापि हो सामने खड़े ?
तुम अलज्ज-से क्यों यहाँ अड़े ?
जिधर पीठ दे दीठ फेरती,
उधर मैं तुम्हें दीठ हेरती !

अथवा

(ग) विसरता नहीं न्याय भी दया
बस रहो प्रिये, जान मैं गया ।
तुम अधीर हो तुच्छ ताप में
रह सकी नहीं आप आप में ।

अथवा

(घ) धिक् प्रतीति भी की न नाथ की,
पर न थी सखी, बात हाथ की ।
प्रतिबिधान मैं क्या करूँ बता,
इस अनर्थ का भी कहीं पता !
(साकेत)

इन्द्रवज्रा

हो इन्द्रवज्रा ततजा ग गा सों ।

इन्द्रवज्रा छन्द में तगण, तगण, जगण और दो गुरु के क्रम से ग्यारह
अक्षर होते हैं । जैसे—

मैं जो नया ग्रन्थ बिलोकता हूँ,
भाता मुझे सो नव मित्र-सा है ।

१. पूर्वोक्त पर दबाव नहीं डालता ।

देखूँ उसे मैं नित बार-बार,
मानों भिला मित्र मुझे पुराना । (गिरिधरशर्मा)

या

संसार है एक अरण्य भारी ।
हुए जहाँ हैं हम मार्गचारी ॥
जो कर्मरूपी न कुठार होगा ।
तो कौन निष्कण्टक पार होगा ॥ (मैथिलीशरण गुप्त)

उपेन्द्रवज्रा

उपेन्द्रवज्रा जतजा ग गा सों ।

उपेन्द्रवज्रा छन्द में जगण, तगण जगण और दो गुरु के क्रम से ग्यारह
अक्षर होते हैं । जैसे—

(क) यथार्थ था सो सपना हुआ है ।
अज्ञीक था जो अपना हुआ है ॥
रही यहाँ केवल है कहानी ।
सुना वही एक नई पुरानी ॥

अथवा

(ख) भिलाप था दूर अभी धनी का ।
विलाप ही था बस का बनी का ॥
अपूर्व आलाप वही हमारा ।
यथा विपंची-द्विर् दार दारा ॥ (साकेत)

या

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देव देव ॥

अथवा

हँसो हँसो हे शशि, फूल फूलो ।
हँसो, हिंडोरे पर बैठ फूलो ॥
यथेष्ट मैं रोदन के लिये हूँ ।
झड़ी लगा दूँ, इतना पिये हूँ ॥ (सकेत)

उपजाति

उपेन्द्रवज्रा अरु इन्द्रवज्रा, दोऊ जहाँ हैं उपजाति जानो ।

उपजाति छन्द में कुछ चरण इन्द्रवज्रा के और कुछ चरण उपेन्द्रवज्रा के होते हैं । दोनों के संयोग से चौदह प्रकार के उपजाति बनते हैं ।

परोपकारी बन वीर आओ ।
नीचे पड़े भारत को उठाओ ॥
हे मित्र, त्यागो मद मोह माया ।
नहीं रहेगी यह नित्य काया ॥ (रामनरेश त्रिपाठी)

इस पद्य में आदि और अन्त के पाद उपेन्द्रवज्रा के हैं, बीच के दो पाद इन्द्रवज्रा के हैं ।

दूसरा उदाहरण—

श्रीमान धीमान वही मनस्वी ।
वही सुसम्पन्न वही यशस्वी ॥
परोपकारी नर-रत्न जो है ।
स्वर्गीय है जीवन-मुक्त सो है ॥ (छन्दःशिक्षा)

इस पद्य के आदि और अन्त के चरणों में इन्द्रवज्रा का, और बीच के दो चरणों में उपेन्द्रवज्रा का लक्षण घटता है ।

अलक्ष की बात अलक्ष जानें ।
समक्ष को ही हम क्यों न मानें ॥
रहे वहीं प्लावित प्रीति धारा ।
आदर्श ही ईश्वर है हमारा ॥ (साकेत)

इसके प्रथम तीन पाद उपेन्द्रवज्रा के तथा चौथा पाद इन्द्रवज्रा का है ।
इस तरह कहीं एक या एक से तीन तक पंक्तियाँ इन्द्रवज्रा की या उपेन्द्र-
वज्रा की होने से छन्द का नाम उपजाति हो जाता है ।

जगती जाति

बारह अक्षरों के छन्द (भेद ४०६६)

भुजंग प्रयात

‘भुजंगप्रयाता’ बने चार या सौ ।

इसमें चार यगण होते हैं । जैसे—

(क) अरी व्यर्थ है व्यंजनों की बड़ाई ।
हटा थाल, तू क्यों इसे आप लाई ॥
वही पाक है, जो बिना भूख भावे ।
बता किन्तु तू ही, उसे कौन खावे ॥

अथवा

(ख) बनाती रसोई सभी को खिलाती ।
इसी काम में आज मैं तृप्ति पाती ॥

रहा किन्तु मेरे लिये एक रोना ।

खिलाऊँ किसे मैं अल्लोना-सल्लोना ॥ (साकेत)

प्रमिताक्षरा

प्रमिताक्षरा सजससा बिलसै ।

इस छन्द में सगण, जगण, सगण और सगण होते हैं । जैसे—

अब भी समस्त वह नाथ खड़े ।

बढ़ किन्तु रिक्त यह हाथ पड़े ॥

न वियोग है न यह योग सखी,

कह, कौन भाग्य-मय भोग सखी ?

अथवा

(क) अति द्वार-द्वार महीं युद्ध भये ।

बहु ऋक्ष कंगूरनि लागि गये ॥

तब स्वर्ण लंक महीं शोभ भई ।

जनु अग्नि-ज्वाला महीं धूम मई ॥

अथवा

(ख) हरुवाह जाय सिय पाँय परी ।

अपिनारि सूँघि सिर गोद धरी ॥

बहु अंग राग अंग अंग रये ।

बहु भाँति ताहि उपदेश दये ॥ (रामचन्द्रिका)

द्रुतविलम्बित

द्रुतविलम्बित माहि नभा भरा ।

इस छन्द में नगण, भगण, भगण और रगण होते हैं । जैसे—

- (क) सखि विचार कभी उठता यही—
 अवधि पूर्ण हुई, प्रिय आ गये !
 तदपि मैं मिलते सकुचा रही,
 वह वही, पर आज नये नये !

अथवा

- (ख) स्वजनि, पागल भी यदि हो सकूँ ।
 कुशल तो, अपनापन खो सकूँ ॥
 शपथ है उपचार न कीजियो ।
 अवधि की सुध ही तुम लीजियो ॥ (साकेत)

अथवा

दिवस का अवसान समीप था,
 गगन था कुछ लोहित हो चला ।
 तरु शिखा पर थी अब राजती,
 कमलिनी - कुल - बल्लभ की प्रभा । (प्रियप्रवास)

अथवा

बिफल जीवन व्यर्थ बहा, बहा,
 सरस दो पद भी न हुए हवा ।

कठिन है कविते, तब भूमि ही,
पर यहाँ श्रम भी सुख-सा रहा ॥

अथवा

इतरपापफलानि यदृच्छया
वितर तानि सहे चतुरानन ।
अरसिकेषु कवित्वनिवेदनम्
शिरसि मा लिख मा लिख मालिख ।

मोदक

चार भकार रचौ तुम 'मोदक' ।
मोदक छन्द में चार भकार (ग) होते हैं । जैसे—
हो निज देश-सुधार सखा, तब ।
उन्नति के कुछ काम करो जब ।
केवल हैं उपदेश वृथा सब ।
भूख मिटे मन-मोदक से कब ।

(छंदरत्नावली)

अथवा

राजसुता इक मन्त्र सुनो अब
चाहत हौं भुव भाव हरो सब ।
पावक में निज देहहिं राखहु
छाय शरीर मृगैं अभिलाषहु

(रामचन्द्रिका)

तोटक

विलसै सचतुष्टय 'तोटक' में ।

तोटक छन्द में चार सगणों (॥५) के क्रम से बारह अक्षर होते हैं ।
जैसे—

सखि, नील नभस्सर में उतरा
यह हंस अहा, तरता-तरता ।
अब तारक-मौक्तिक शेष नहीं ।
निकला जिनको चरता-चरता ।

(मैथिलीशरण गुप्त)

अथवा

(क) चिथड़े तक भी न रहे तन पै
धिक धूलि पड़े इस जीवन पै ।
अवलोक अमंगल दंग हुआ ।
बस भारत का रस भंग हुआ ।

(नाथूराम शंकर)

या

(ख) मतभेद भयानक पाप रहा ।
बिन नेह न मेल-मिलाप रहा !
अभिमान अधोमुख ठेक रहा ।
अधमाधम ढोंग ढकेल रहा ।

(नाथूराम शंकर)

अथवा

जय राम सदा सुख धाम हरे ।
रघुनायक सायक चाप धरे ।
भव बारण दारण सिंह^१ प्रभो
गुण सागर नागर नाथ विभो !

(छन्दःप्रभाकर)

स्रग्विणी

चार हों रेफ तो स्रग्विणी छन्द है ।
इस छन्द में चार रगण (५९) होते हैं जैसे—

वे गृही धन्य हैं जो मनोहारिणी ।
मिष्टभाषी सुशीला सदाचारिणी ।
धर्मशीला सती धीरता-धारिणी ।
सुन्दरी युक्त हैं प्रेम-शृंगारिणी ।

(छन्दरत्नावली)

अथवा

राम आगे चले मध्य सीता चली ।
बन्धु पाछे भये सोभ सोभै भली ।
देखि देही सबै कोटिधा कै मनो ।
जीव जीवेश के बीच माया मनो ।

(रामचन्द्रिका)

१. 'प्र' संयुक्त होने पर भी 'ह' को गुरु नहीं करता ।

अथवा

अच्युतं केशवं रामनारायणम्
 कृष्ण दामोदरं वासुदेवं हरिम् ।
 श्रीधरं माधवं गोपिकावल्लभम्
 जानकीनायकं रामचन्द्रं भजे ।

इन्द्रवंशा

है इन्द्रवंशा ततजार शोभिनी ।

इन्द्रवंशा छन्द में तगण, तगण (५५), जगण, १५ और रगण (१५) के क्रम से १२ अक्षर होते हैं । जैसे—

यों ही बड़ा हेतु हुए बिना कहीं
 होते बड़े लोग कठोर यों नहीं ।
 वे हेतु भी यों रहते सुगुप्त हैं
 ज्यों अद्रि अम्भोनिधि में प्रलुप्त हैं । (छन्दःशिक्षा)

अथवा

आये जबै सीय समेत राम हैं ।
 छाये महा मङ्गल औध धाम हैं ।
 भ्राता भरथादि करें प्रनाम हैं ।
 याचा किये पूरित सर्व काम हैं ।

(छन्दरत्नावली)

वंशस्थ

लसै सु 'वंशस्थ' जता जरा शुभा ।

वंशस्थ छन्द में जगण, तगण, जगण और रगण के क्रम से १२ अक्षर होते हैं । जैसे—

- (क) घड़े लिये कामिनि औ' कुमारियाँ,
अनेक कूपों पर थीं सुशोभिता ।
पधारती जो जल ले स्व-गेह थीं ।
बजा बजा के निज नूपुरादि को ।

अथवा

- (ख) तजा किसी ने जल से भरा घड़ा
उसे किसी ने शिर से गिरा दिया ।
समस्त दौड़ीं सुधि गात की गँवा
सरोज-सा सुन्दर श्याम देखने ।

अथवा

- (ग) हरीतिमा का सुविशाल-सिंधु सा
मनोज्ञता की रमणीय भूमि सा ।
विचित्रता का शुभ-सिद्ध-पीठ सा
प्रशान्त-वृन्दावन दर्शनीय था ।

(प्रियप्रवास)

माधव

वंशस्थ और इन्द्रवंशा के संयोग से जो छन्द बनता है उसे 'माधव' कहते हैं । जैसे—

दया मया छू जिसको नहीं गई ।
पाषाण जी का नर कूर निर्दयी ।

है ढोर ही पुच्छ-विषाण हीन है ।
है भार भू का खल दीन हीन है ॥ (छन्दःशिक्षा)

इस पद्य का प्रथम पाद वंशस्थ वृत्त का है, बाकी के तीन इन्द्रवंशा के हैं । इस प्रकार दो छन्दों के मिश्रण से बना हुआ यह माधव नाम का उपजाति छन्द है ।

मोतियदाम

जकारचतुष्टय 'मोतियदाम' ।

'मोतियदाम' छन्द में चार जगण होते हैं । जैसे—

(क) गये तहँ राम, जहाँ निज मात ।
कही यह बात कि हौं बन जात ॥
कलू जनि जी दुख, पावहु माइ ।
सु देहु असीस मिलौं फिरि आइ ॥

अथवा

(ख) रहौ चुप हो सुत क्यों^१ बन जाहु
न देखि सकैं तिनकें उर दाहु ।
लगी अब बाय तुम्हारे^१ बाय ।
करैं उलटी बिधि क्यों^१ कहि जाय ।

(रामचन्द्रिका)

१. संयुक्त होने पर भी पूर्व वर्ण को गुरु नहीं करता ।

जलोद्धतगति

कहैं जसजसा जलोद्धतगती ।

जलोद्धतगति छन्द में जगण, सगण, जगण और सगण के क्रम से १२ अक्षर होते हैं । जैसे—

असार जग को, ससार समझो,
प्रपंच लख के उदास मत हो ।
डिगो न, विचलो चलो सँभल के,
प्रसन्न मन से स्वधर्म पथ में ।

(छन्दःशिक्षा)

अति जगती जाति

तेरह वर्ण के छन्द (भेद ८१६२)

तारक

ससि सीस गहे स्वइ तारक भारी

तारक छन्द में सगण, सगण, सगण, सगण और एक गुरु के क्रम से तेरह अक्षर होते हैं, जैसे—

(क) अति गाजत बाजत दुन्दुभि मानो
निरघात सबै पबिपात बखानो ।
धनु है यह गौरमदाहन नार्हीं
सरजाल बहै जलधार बृथाहीं ॥

या

(ख) घनघोर घने दसहू दिस छाये
मघवा जनु सूरज पै चढ़ि आये ।
अपराध बिना छिति के तन ताये
तिन पीडन पीडित हो उठि धाये॥

या

(ग) हम बानर हैं रघुनाथ पठाये
तिनको तरुणी अवलोकन आये ।
हति मोहि महामति भीतर जैये
तरुणी हि हते कबलों सुख पैये ॥ (रामचन्द्रिका)

मञ्जुभाषिणी

स ज सा ज गा भनत मञ्जुभाषिणी ।

इस छन्द में सगण, जगण, सगण, जगण और एक गुरु के क्रम से
तेरह वर्ण होते हैं । जैसे—

चुप बैठे राम शुभ नाम लीजिए,
गुण से अतीत गुणगान कीजिए ।
मत वाम दाम पर चित्त दीजिए ।
तजि मोह-जाल हरि-भक्ति भीजिए । (छन्दःशिक्षा)

राधा

‘रा त मा या गा’ सजावै छन्द ‘राधा’ को ।

रगण, तगण, भगण, यगण और एक गुरु के क्रम से राधा छन्द बनता है । जैसे—

भूल जाता जो दिष्ट को पुण्य सो पाता,
 डूब जाता है उसी का, जो फिरे गाता ।
 मातृ भाषा मातृ-भू से है जिसे नाता ।
 धन्य है वो गण्य है वो मान्य है भ्राता । (छन्दःशिक्षा)

—•—

शक्करी जाति

चौदह अक्षरों के छन्द (भेद १६३८४)

वसन्ततिलका

जानौ 'वसन्ततिलका' 'त भ जा ज गा गा' ।

वसन्ततिलका छन्द में तगण, भगण, जगण, जगण और दो गुरु के क्रम से चौदह अक्षर होते हैं । जैसे—

ओहो ! मरा वह वराक वसन्त कैसा ?
 ऊँचा गला रुँध गया अब अन्त जैसा ।
 देखो, बड़ा ज्वर, जरा-जड़ता जगी है ।
 लो, ऊर्ध्व साँस उसकी चलने लगी है । (साकेत)

अथवा

(क) थे दीखते परम वृद्ध नितान्त रोगी ।
 या थी नवागत बधू गृह में दिखाती ।

कोई न और इनको तज के कहीं था ।
सूने पड़े सदन गोकुल के सभी थे ।

अथवा

(ख) नाना प्रसंग उठते जन-संघ में थे ।
जो थे सशंकित महा करते सबों को ।
था सुखता अधर औ' कँपता कलेजा ।
चिन्ता-अपार चित में चिनगी लगाती ।

अथवा

आँखों अनूप छवि है जिसने विलोकी
वंशी-निनाद मन दे जिसने सुना है ।
देखा विहार इस यामिनि में जिन्होंने
कैसे मुकुन्द उनके उर से कढ़ेंगे ।

अथवा

(ग) रोना महा-अशुभ जान पयान-बेला
आँसू न ढाल सकती निज नेत्र से थी ।
रोये बिना न छन भी मन मानता था ।
दूबी महान द्विबिधा जन-मण्डली थी ।

(प्रियप्रवास)

अथवा

नाना पुराण निगमागम सम्मतं यद्
रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि ।
स्वान्तस्सुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा—
भाषानिबन्धमति मंजुल मातनोति । (तुलसी)

मुकुन्द

सो है 'मुकुन्द' 'तभजाजगला' सुछन्द ।

मुकुन्द छन्द में तगण, भगण, जगण, जगण गुरु और लघु के क्रम से
चौदह अक्षर होते हैं । जैसे—

फूली लवङ्ग लवली लतिका विलोल,
भूले जहाँ भ्रमर विभ्रम मत्त डोल ।
बोलैं सुहंस शुक कोकिल केकिराज,
मानों बसंतभट बोलत युद्धकाज । (छन्दःशिक्षा)

अथवा

सन्तुष्ट आक पर नित्य रहो सहर्ष,
दे प्रीष्म सन्तत करो, उसका प्रकर्ष ।
है कौन हेतु पर हो, कर जो कराज
हो नष्ट भ्रष्ट करते, तुम ये तमाज ।

(छन्द-रत्नावली)

१. पूर्व वर्ण को गुरु नहीं बनाता ।

अति शक्ती जाति

पन्द्रह वर्णों के छन्द (भेद ३२७६८)

मालिनी

‘न न म यय’ गणों से मालिनी छन्द होता ।

मालिनी छन्द में नगण, नगण, मगण, यगण और यगण के क्रम से पन्द्रह अक्षर होते हैं । जैसे—

(क) यह सकल दिशायें आज रो-सी रही हैं ।
 यह सदन हमारा है हमें काट खाता ।
 मन उचट रहा है चैन पाता नहीं है ।
 बिजन-बिपिन में है भागता सा दिखाता ।

अथवा

(ख) मनहरण हमारे प्रात जाने न पावें ।
 सखि, जुगुत हमें तो सूझती है न ऐसी ।
 पर यदि यह काली यामिनी ही न बीते ।
 तब फिर ^१ब्रज कैसे प्राणप्यारे तजेंगे ।

अथवा

(ग) सखि, मुख अब तारे क्यों छिपाने लगे हैं ।
 वह दुख लखने की ताब क्या है न लाते ।
 परम-विफल होके आपदा टालने में ।
 वह मुख अपना है लाज से या छिपाते ।

१. पूर्ववर्ण को गुरु नहीं करता ।

अथवा

(घ) सब समझ गई मैं काल की क्रूरता को ।
 पल-पल वह मेरा हूँ कलेजा कँपाता ।
 अब नभ उगलेगा आग का एक गोला ।
 सकल ब्रज-धरा को फूँक देता जलाता ।

(प्रियप्रवास)

अथवा

(क) सखि, विहग, उड़ा दे, हों सभी मुक्तिमानी,
 सुन शठ शुकवाणी—‘हाय रूठो न रानी’ ।
 खग, जनकपुरी की ब्याह दूँ सारिका मैं ?
 तदपि यह वहीं की त्यक्त हूँ दारिका मैं ।

अथवा

(ख) कह विहग, कहाँ हैं आज आचार्य तेरे ?
 विकच बदन वाले वे कृती कान्त मेरे ?
 सचमुच ‘मृगया में’ ? तो अदेरी नये वे ।
 यह हत हरिणी क्यों छोड़ यों ही गये वे ।

अथवा

(ग) टप-टप गिरते थे अश्रु नीचे निशा में ।
 झड़-झड़ पड़ते थे तुच्छ तारे दिशा में ।

१. पूर्व वर्ण को गुरु नहीं बनाता ।

कर पटक रही थी निम्नगा-पीट छाती ।
सन-सन करके थी शून्य की साँस आती ।

(साकेत)

चामर

राज-राज रेफ सो लसै सुचारु चामरम् ।
चामर छन्द में रगण, जगण, रगण, जगण और रगण के क्रम से
पन्द्रह अक्षर होते हैं । जैसे—

कुञ्ज में गुपाल लाल राधिका विराज हीं ।
वृन्द गोपिकान के सुराग-रङ्ग साज हीं ।
नृत्य में उमङ्ग सङ्ग बीन बेनु वाज हीं ।
लच्छरी बिलोकि दच्छ अच्छरी सु लाज हीं ।

(छन्द-रत्नावली)

अथवा

(क) देखि-देखि कै अशोक राजपुत्रिका कह्यौ^१ ।
देहि मोहि आगि तैं जु अंग आगि 'हूँ' रह्यौ^१ ।
ठौर पाइ वात-पुत्र डारि मुद्रिका दर्ई ।
आस-पास देखि कै उठाय हाथ कै लई ।

अथवा

(ख) मत्त दन्तिराज राजि वाजिराज राजि कै ।
हेम हीर मुक्त चोर चारु साज साजि कै ।

१. पूर्ववर्ण को गुरु नहीं करता ।

बेष-बेष वाहिनी असेष वस्तु सांघियो ।
दायजो विदेहराज भाँति-भाँति को दियो ।

अथवा

(ग) वख-भौन स्यो^१ बितान आसने विछावने ।
अख-सख अंगनान भाजनादि को गने ।
दासि-दास बासि-बास रोम पाट को कियो ।
दायजो विदेहराज भाँति-भाँति को दियो ।

अथवा

(घ) आइयो कुरंग एक चारु हेम हीर को ।
जानकी समेत चित्त मोहि राम वीर को ।
राजपुत्रिका समीप साधु बन्धु राखि कै ।
हाथ चाप बाण लै गये गिरीश नाँखि कै ।

(रामचन्द्रिका)

निशिपालिका छन्द

भोज सुनि राघवहिं द्योस निसिपाल है ।

निशिपालिका छन्द में भगण, जगण, सगण, नगण और रगण के क्रम से १५ अक्षर होते हैं । जैसे—

(क) गान विन मान विन हास विन जीवहीं ।
तस नहिं खाय जल सीत नहिं पोवहीं ।

१. पूर्वोच्चर पर दबाव नहीं डालता ।

तेल तजि खेल तजि खाट तजि सोवहीं ।
सीत जल न्हाय नहिं उष्ण जल जोवहीं ।

अथवा

(ख) बानर न जानु सुर जानु सुभगाथ हैं ।
मानुष न जानु रघुनाथ जगन्नाथ हैं ।
जानकि हि देहु करि नेहु कुल देह सों ।
आजु रण साजि पुनि गाजि हैंसि मेह सों ।

अथवा

(ग) शोच अति पोच उर मोच दुख दानिये ।
मातु यह बात अवदात मम मानिये ।
रैनचर छत्र बहु भाँति अभिलाष हीं ।
दीन स्वर राम कबहूँ न मुख भाषहीं ।

(रामचन्द्रिका)

अष्टि जाति

सोलह अक्षरों के छन्द (भेद ६५५३६)

पञ्चचामर—

जरा-जरा जगा कहैं कवीन्द्र पञ्चचामरम् ।

पञ्चचामर छन्द में जगण, रगण, जगण, रगण, जगण और एक गुरु के क्रम से सोलह अक्षर होते हैं । जैसे—

१. पूर्वार्ध को गुरु नहीं बनाता ।

महेश के भहत्व का विवेक बार-बार हो ।
अखण्ड एक तत्त्व का अनेकधा विचार हो ।
बिगाड़ से समाज के प्रबन्ध का सुधार हो ।
प्रवीण-पञ्चराज के प्रपञ्च का प्रचार हो ।

(छन्दःशिक्षा)

अथवा

उसी उदार की कथा सरस्वती बखानती,
उसी उदार से धरा कृतार्थ भाव मानती ।
उसी उदार की सदा सजीव कीर्ति कूजती ।
तथा उसी उदार को समस्त सृष्टि पूजती ।

(मैथिलीशरण गुप्त)

अथवा

(क) न हौं रहौं न जाँह जू विदेह-धाम को अबै ।
कही जु बात मातु पै सु आजु मै सुनी सबै ।
लगै छुधाहि माँ भली बिपत्ति माँ नारिये ।
पियास-त्रास नीर वीर युद्ध में सँभारिये ।

अथवा

(ख) पक्षौ विरंचि मौन वेद जीव सोर छंडि रे ।
कुबेर बेर कै कही न यक्ष भीर मंडि रे ।

१. पूर्वसर को गुरु नहीं बनाता ।

दिनेश जाय दूरि बैठि नारदादि संगही ।
न बोलु चन्द मन्द बुद्धि इन्द्र की सभा नहीं ।

(रामचन्द्रिका)

चञ्चला

चञ्चला रजा-रजा रला कहन्त छन्दमाल ।

चञ्चला छन्द में रगण, जगण, रगण, जगण, रगण और लघु के क्रम से सोलह अक्षर होते हैं । जैसे—

(क) रामचन्द्र धाम तें चले सुने जबै नृपाल ।
बात को कहै सुनै सु हो गये महा बिहाल ।
ब्रह्मरंध्र फोरि जीव यौ मिल्यो^२ जुलोक^१ जाय ।
गेह तूरि ज्यों^३ चकोर चन्द्र में मिलै उदाय ।

अथवा

(ख) रामचन्द्र जू कहन्त जातरूप लङ्क देखि,
ऋच्छ वानरालि घोर और चारिहुं विशेषि ।
मञ्जु कुञ्ज गन्ध-लुब्ध भौर भीर-सो विशाल,
'केशुदास' आसपास शोभिजै मनो मराल ।

(रामचन्द्रिका)

१. जुलोक ।

२. ३. पूर्वोत्तर को गुरु नहीं बनाता ।

अत्यष्टि जाति

सत्रह अक्षरों के छन्द (भेद १३१०७२)

मन्दाक्रान्ता (यति ४, १०, १७)

मन्दाक्रान्ता मभनत तगागा कहैं छन्दवेदी ।

मन्दाक्रान्ता छन्द में मगण, भगण, नगण, तगण, तगण और दो गुरु के क्रम से सत्रह अक्षर होते हैं । चौथे, दसवें और सत्रहवें अक्षर पर यति होती है । जैसे—

दो वंशों में प्रकट करके पावनी लोक-लीला,
सौ पुत्रों से अधिक जिनकी पुत्रियाँ पूतशीला ।
त्यागी भी हैं शरण जिनके, जो अनासक्त गेही ।
राजा-योगी जय जनक वे पुण्यदेही, विदेही । (साकेत)

अथवा

(क) नाना बातें दुख शमन को प्यार से थी सुनाती ।
धीरे-धीरे नयन जल थी पोंछती राधिका का ।
हा ! हा ! प्यारी दुखित मत हो यों कभी भाखती थी ।
रोती-राती विकल ललिता आप होती कभी थी ।

अथवा

(ख) सूखा जाता कमल-मुख था होंठ नीला हुआ था ।
दोनों आँखें बिपुल-जल में डूबती जा रही थीं ।
शंकाएँ थीं बिकल करतीं कौपता था कलेजा ।
खिजा दीना परम-मलिना उन्मना राधिका थीं ।

अथवा

(ग) तारे डूबे तम टल गया छा गई ब्योम-लाली ।
 पंछी बोले तमचुर जगे ज्योति फैली दिशा में ।
 शाखा डोली सकल-तरु की कंज फूले सरो में ।
 धीरे-धीरे दिनकर कढ़े तामसी रात बीती ।

अथवा

(घ) संकोची है परम अति ही धीर है लाल मेरा ।
 लज्जा होती अमित उसको माँगने में सदा थी ।
 जैसे लेके स-रुचि सुत को अंक में मैं खिलाती ।
 हा ! वैसे ही अब नित खिला कौन बामा सकेगी ।

अथवा

(ङ) जो मैं कोई विहग उड़ता, देखती ब्योम में हूँ ।
 तो उत्कण्ठा विवश चित में आज भी सोचती हूँ ।
 होते मेरे निबल तन में पक्ष जो पक्षियों से ।
 तो यों ही मैं समुद्र डढ़ती श्याम के पास जाती ।

(प्रियप्रवास)

शिखरिणी (यति ६, १७)

कवीन्द्रों को मोहै यमनसभला गा शिखरिणी ।
 शिखरिणी छन्द में यगण, मगण, नगण, सगण, भगण, लघु और

गुरु के कम से सत्रह अक्षर होते हैं । छुटे और सत्रहवें अक्षर पर यति होती है । जैसे—

पिऊँ ला, खाऊँ ला, सखि, पहन लूँ ला, सब करूँ,
जिऊँ मैं जैसे हो, यह अवधि का अर्णव तरूँ ।
कहे जो, मानूँ सो, किस विध बता, धीरज धरूँ ?
अरी, कैसे भी तो पकड़ प्रिय के वे पद मरूँ । (साकेत)

अथवा

अनूठी-आभा से सरस-सुषमा से सुरस से ।
बना जो देती थी बहु-गुणमयी भू-विपिन की ।
निराले फूलों की विविध-दल-वाली अनुपमा ।
जड़ी बूटी नाना बहु-फलवती थीं बिलसती ।
(प्रियप्रवास)

अथवा

छटा कैसी प्यारी, प्रकृति-तिय के चन्द्रमुख की,
नया नीला ओढ़े, वसन चटकीला गगन का ।
जरी-सल्मा-रूपी, जिस पर सितारे सब जड़े ।
गले में स्वर्गङ्गा, अतिललित माला सम पड़ी ।
(छन्दःशिक्षा)

अथवा

मिली मैं स्वामी से, पर कह सकी क्या सँभल के ।
बहे आँसू हो के, सखि ! सब उपासम्भ गल के ।

उन्हें' हो आई जो, निरख मुझको नीरव दया ।
उसी की पीड़ा का, अनुभव मुझे हा ! रह गया ।

(साकेत)

अथवा

कभी धीरे-धीरे व्यजन करती मन्द गति से ।
चली आती दौड़ी पवन मदमाती मलय की ।
कभी चित्ताकर्षी, शिशिर कणवर्षी विपिन में ।
दिखाती है शोभा, सुखद मन लोभा न किसका ?

(छन्द-रत्नावली)

पृथ्वी (यति ८, १७)

जसा जस य जाग को कहत शेष 'पृथ्वी' शुभा ।

पृथ्वी छन्द में जगण, सगण, जगण, सगण, यगण, लघु और गुरु के क्रम से सत्रह अक्षर होते हैं । आठवें और सत्रहवें अक्षर पर यति होती है ।
जैसे—

निहार सखि, सारिका कुछ कहे बिना शान्त-सी,
दिये श्रवण हैं यहीं, इधर मैं हुई भ्रान्त-सी ।
इसे पिशुन जान तू, सुन सुभाषिणी है बनी—
'धरो !' खगि, किसे धरूँ ? धृति लिये गए हैं धनी ।

(साकेत)

अथवा

न जा उधर हे सखी, वह शिखी सुखी हो नचे,
न संकुचित हो कहीं, मुदित लास्य-लीला रचे ।
बनूँ न पर विघ्न मैं, बस मुझे अबाधा यही,
विराग-अनुराग में अहह ! इष्ट एकान्त ही । (साकेत)

धृति जाति

अठारह अक्षरों के छन्द (भेद २६२१४४)

चञ्चरी यति (८, १८)

चञ्चरी रसजाजभार कवीन्द्र लोग कहा करें ।

चञ्चरी छन्द में रगण, सगण, जगण, जगण, भगण और रगण के
क्रम से अठारह अक्षर होते हैं । यति आठवें अक्षर और अठारहवें अक्षर पर
होती है । जैसे—

ठयोम में मुनि देखिये अति लाल श्री मुख साजहीं,
सिन्धु में बड़वाग्नि की जनु ज्वालमाल बिराजहीं ।
पद्मरागिनी की किधौं दिवि धूरि पूरित-सी भई ।
सूर-बाजिन की खुरी अति तिष्ठता तिनकी हई ।

अथवा

(क) सेतु सीतहिं शोभना दरसाय पंचवटी गये ।
पाँच लागि अगस्त के पुनि अत्रियौ तु बिदा भये ।
चित्रकूट बिलोकि कै तब ही प्रयाग बिलोकियो ।
भारद्वाज बसैं जहाँ जिनते न पावन है बियो ।

अथवा

(ख) लंक लाय दियो बली हनुमन्त सन्तन गाइयो,
 सिंधु बाँधन सोधि कै नल छोर छोट बहाइयो ।
 ताहि तोहि समेत अन्ध उखारि हौं उलटी करौं ।
 आजु राज कहाँ विभीषण बैठिहैं तिहि ते डरौं ।

(रामचन्द्रिका)

अतिधृति जाति

उन्नीस अक्षरों के छन्द (भेद ५२४२८८)

शादूलविक्रीडित (यति १२, १६)

जा में हो मस जा सता तग वही शादूलविक्रीडिता ।

जिस छन्द में मगण, सगण, जगण, सगण, तगण, तगण और एक
 गुरु हो, उसे शादूलविक्रीडित छन्द कहते हैं । इसके वारहवें अक्षर पर और
 पादांत पर यति होती है । जैसे—

सींचें ही बस मालिनैं, कलश ले, कोई न ले कर्तरी ।
 शाखी फूल फलें यथेच्छ बढ़के, फैंलें लताएँ हरी ।
 क्रीड़ा-कानन-शैल यन्त्र-जल से संसिक्त होता रहे ।
 मेरे जीवन का, चलो सखि, वहीं सोता भिगोता बहे ।

(साकेत)

अथवा

आ बैठी उर मोह जन्य जड़ता विद्या विदा हो गई ।
 पाई कायरता मलीन मन की हा ! वीरता खो गई ।
 जागी दीन दशा दरिद्रपन की श्री सम्पदा सो गई ।
 माया शंकर की हँसाय हमको रुद्रा बनी रो गई ।

(छन्दःशिक्षा)

अथवा

- (क) जैसे हो लघु वेदना हृदय की औ दूर होवे व्यथा ।
 पावें शान्ति समस्त लोग न जलें मेरे वियोगाग्नि में ।
 ऐसे ही बर-ज्ञान तात ब्रज को देना बताना क्रिया ।
 माता का सविशेष तोष करना औ वृद्ध-गोपेश का ।

अथवा

- (ख) प्रातः काल अपूर्व-यान मँगवा औ साथ ले सारथी ।
 ऊधो गोकुल को चले सदय हो स्नेहाम्बु से भीगते ।
 वे आए जिस काल कान्त-ब्रज^१ में देखा महामुग्ध हो ।
 श्री वृन्दावन की मनोज्ञ-मधुरा श्यामायमाना मही ।
 (प्रियप्रवास)

अथवा

आते ही मुख-म्लान^१ देख हरि का वे दीर्घ-उत्कण्ठ हो ।
 बोले क्यों इतने मलीन प्रभु हैं ? है वेदना कौनसी ?
 फूले-पुष्प-विमोहिनी-विकचता क्या हो गई आपकी,
 क्यों है नीरसता प्रसार करती उत्फुल्ल अंभोज में ।

कृति जाति

बीस अक्षरों के छन्द (भेद १०४८५७६)

गीतिका (१२-२०)

सज जाभ रास लगा, महामति शेष गावहिं गीतिका ।
 गीतिका छन्द में सगण, दो जगण, भगण, रगण, सगण, लघु और
 १; पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता ।

गुरु के क्रम से बीस अक्षर होते हैं। इसके बारहवें तथा बीसवें अक्षर पर यति होती है। जैसे—

सज जीभ री ! सु जगै मुहीं सुन, मो कहा चित जाय कै ।
नय काल लखन जानकी सह, राम को नित गायकै ।
पद मो शरीरहिं राम के कल, धाम को लय धावहू ।
कर, बीन लै अति दीन हूँ^१ नित, गीति कान सुनावहू ।

(छन्दःप्रभाकर)

प्रकृति जाति

इक्कीस वर्णों के छन्द (भेद २०६७१५२)

स्रग्धरा (यति ७, १४, २१)

मा रा भा ना य या या, कविवर सुखदा, स्रग्धरा छंदरानी ।

स्रग्धरा छन्द में मगण, रगण, भगण, नगण और तीन यगणों के क्रम से इक्कीस अक्षर होते हैं। सातवें, चौदहवें और इक्कीसवें अक्षर पर यति होती है। जैसे—

(क) लाई है वीर क्यों^१ तू ? हठ मत कर यों, मैं पियूँगी न आत्मी,
मैं हूँ क्या हाय ! कोई शिशु सफल हठी, रङ्ग भी राज्यशास्त्री ?
माना तूने मुझे है तरुण विरहिणी, वीर के साथ ब्याहा;
आँखों का नीर ही क्या कम फिर मुझको ? चाहिए और क्या हा !

अथवा

(ख) रोती हैं और दूनी निरख कर मुझे दीन-सी तीन साँसें,
होते हैं देवर श्रीनत, हत बहनें छोड़ती हैं उसासें ।

१. पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता ।

आखी, तू ही बता दे, इस विजन बिना मैं कहाँ आज जाऊँ ?
 दीना, हीना, अधीना ठहरकर जहाँ शान्ति दूँ और पाऊँ ?
 (साकेत)

अथवा

नाना फूलों-फलों से, अनुपम जग की वाटिका है विचित्रा ।
 भोका हैं सैकड़ों ही, मधुप शुक तथा कोकिला गानशीला ।
 कौवे भी हैं अनेकों, परधन हरने में सदा अग्रगामी ।
 कोई है एक माखी, सुधि इन सब की जो सदा ले रहा है ।
 (छन्द-रत्नावली)

आकृति जाति

बाईस अक्षरों के छन्द (भेद ४१६४३०४)

बाईस अक्षरों से लेकर छब्बीस अक्षरों तक के छन्दों को सामान्यतया 'सवैया' कह देते हैं । हम यहाँ मुख्य-मुख्य ही सवैया छन्दों का उल्लेख करेंगे ।

मदिरा

सात भकार गकार जबै तब पिङ्गलवेदि कहैं मदिरा ।

मदिरा छन्द में सात भकार और एक गुरु के क्रम से बाईस अक्षर होते हैं । जैसे—

(क) चेटक सों धनु भंग कियो, तन रावण के अति ही बलु हो ।
 बाण समेत रहे पचिकै तहँ जा सँग पै न तजौ' थलु हो ।

बाण सु कौन ? बली बलि को सुत, वै बलि बावन बाँधि लियो ।
बेइ सुतौ जिनकी चिर-चेरिन नाच नचाइ क^१ छाँदि दियो ।

अथवा

(ख) लक्ष्मण के पुरिषान कियो पुरुषारथ सो न कही^२ परई ।
बेष बनाय किया बनितान कु^३ देखत केशव ही^४ हरई ।
कूर कुठार निहारि तजो फल ताकु^५ यहै जु हियो जरई ।
आशुतु^६ तो कहँ बन्धु महा धिक छत्रिन पै जु दया करई ।

(रामचन्द्रिका)

तेईस अक्षरों के छन्द (भेद ८३८८६०८)

मत्तगयन्द

सात भकार गुरुयुग हों जब मत्तगयन्द कहैं तब ताको ।

मत्तगयन्द छन्द में सात भकार और दो गुरुओं के क्रम से तेईस अक्षर होते हैं । जैसे—

या लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहूँ पुर को तजि डारौं ।
आठहुँ सिद्धि नवौं निधि को सुख नन्द कि गाय चराय बिसारौं ।
'खान' कहै इन नैनन ते ब्रज के बन बाग तड़ाग निहारौं ।
कोटिन हूँ कलधौत क^७ धाम करील कि कुञ्जन ऊपर वारौं ।

(रसखान)

१. कै, २. कहाँ, ३. को, ४. छौ = हृदय, ५. ताको, ६. तो,
७. के ।

अथवा

- (क) प्रातःपयाण^१ कथा सुनके उसके मुख-पंकज का मुरझाना ।
और जरा हँस के उसका अपने मन का वह भाव छिपाना ।
किन्तु अचानक ही उसके वर लोचन में जल का भर आना ।
सम्भव है न कभी मुझको इस जीवन में वह दृश्य भुलाना ।

अथवा

- (ख) खहो रहते तुम नाथ जहाँ रहता मन साथ सदैव वहीं है ।
मंजुल मूर्ति बसी उर में वह नेक कभी टलती न कहीं है ।
लोलुप लोचन को दिखती वह चारु घटा सब काल यहीं है ।
है वह योग मिला हमको जिसमें दुख-मूल वियोग नहीं है ।
(गोपालशरणसिंह)

अथवा

धूर भरे अति सोभित ^२स्यामजु तैसि बनी सिर सुन्दर चोटी ।
खेलत खात फिरँ अँगना पग पैजनि बाजत पीरि कछोटी ।
वाँ छबि को 'रसखान' विलोकत बारत काम कला निज कोटी ।
काग क^३ भाग बड़े सज्जनी हरि-हाथ सु^४ ले राय^५ माखन रोटी ।
(रसखान)

अथवा

- (क) कण्ठ कुठार परै अब हार कि, फूल असोक कि सोक समूरो ।
कै चित्तसारि चढ़ै कि चिता तन चन्दन चर्चि कि पावक पुरो ।

१. प्रयाण ।

२. यहाँ संयुक्त होने पर भी पिछले अक्षर पर जोर नहीं पड़ता ।

३. के, ४. सों, ५. यो ।

लोक मि^१ लोक बढो अपलोक, सु केशवदास जु होउ सु होऊ ।
विप्रन^२ के कुल को भृगुनन्दन, सूर न सूरज के कुल कोऊ ।

अथवा

(ख) दीनदयाल कहावत केशव हौं अतिदीन दशा गहु^३ गाढो ।
रावण के अघ ओघ समुद्रन^४ बूढ़त हौं भर ही गहि काढो ।
ज्यों गज की प्रह्लाद कि कीरत तौहि^५ विभीषण को जस बाढो ।
आरत बन्धु पुकार सुनौ कित आरत हौं तु^६ पुकारन ठाढो ।
(रामचन्द्रिका)

अथवा

ऐस^७ बिहाल बिवाहन सों पग कण्टक जाल लगे पुनि जोए ।
हाथ महा दुख पाव^८ सखा ! तुम आय इते न कितैं दिन खोए ।
देखि सुदाम^९ कि दीन दसा करुना करिकै करुनानिधि रोए ।
पानि परात कु^६ हाथ छुयौ नहिं, नैनन के जल सों पग धोए ।
(नरोत्तमदास, सुदामा-चरित)

संस्कृति जाति

चौबीस अक्षरों के छन्द (भेद १६७७२१६)

दुर्मिल

लगणाष्टक को कहते कवि हैं अति दुर्लभ दुर्मिल 'चन्द्रकला' ।
आठ सगणों से दुर्मिल नामक सवैया बनता है । जैसे—

१. में, २. गहो, ३. में, ४. त्योंहि, ५. तो, ६. से, ७. यौ, ८. मा,
९. को ।

अमरी, इस मोहन मानस के सुन, मादक हैं रसभाव सभी ।
 मधु पीकर और मदान्ध न हो, उड़ जा, बस है अब सेम तभी ।
 पड़ जाय न पङ्कज-बन्धन में निशि यद्यपि है कुछ दूर अभी,
 दिन देख नहीं सकते सविशेष किसी जन का सुखभोग कभी ।
 (साकेत)

अथवा

उपदेश अनेक सुने मन को रुचि के अनुसार सुधार चुके ।
 धर ध्यान यथाविधि मंत्र जपे पढ़ वेद-पुराण बिसार चुके ।
 गुरु-गौरव धार महन्त बने धनधाम कुटुम्ब बिसार चुके ।
 कवि शंकर ज्ञान बिना न तरे सब ओर फिरे मूख मार चुके ।
 नाथूराम शंकर

अथवा

जकड़े हमको तुम खूब रहो, परवा न हमें इस बन्धन की ।
 कुछ सोच नहीं हमको इसका नित है बढ़ती तनुता तन की ।
 रहता तुम में अनुराग जिसे कुछ भीत उसे न किसी जन की ।
 तुम हो रहते जिसके मन में खलती उसको न व्यथा मन की ।

अथवा

(छन्दः रत्नावली)

पुर ते निकसी रघुवीर-वधू, धरि धीर दये मग में डग द्वै^१ ।
 मूलकी भरि भाल कनी जल की, पटु सुखि गए मधुराधर वै ।
 पुनि बूमति है चलनोऽब कितो पिय पनकुटो करिहो कित ह्वै^१ ।
 तिय की लखि आतुरता पिय की अँखियाँ अति चारु चलीजल ह्वै^१ ।

(तुलसी, कवितावली)

१. पूर्वाक्षर को गुरु नहीं करता ।

किरीट

आठ भकार लसैं सु 'किरीट' सवैयन में सिरमौर कहावत ।
किरीट सवैये के प्रत्येक पाद में आठ भगण के क्रम से चौबीस वर्ण होते हैं । जैसे—

बन्धु विरोध करें सिगरो ऋगरो नित होत सुधारस चाटत ।
मित्र करै करनी रिपु की धरनी-धर देखि न न्याउ निपाटत ।
'राम' कहै विष होत सुधा घर नारि सती पति सों चित फाटत ।
भा विधना प्रतिकूल जबै तब ऊँट चढ़े पर कूकर काटत ।
(छन्द रत्नावली)

अथवा

मानस हौं तु^२ वही 'रसखानि' बसौं ब्रज गोकुल गाँव के^३ ग्वारन ।
जो पशु हौं तु^२ कहा बस मेरो^३, चरौं नित नन्द कि धेनु मँझारन ।
पाहन हौं तु^२ वही गिरि को, जु धर्यो^१ कर छत्र पुरन्दर धारन ।
जो खग हौं तु^२ बसेर^४ करौं, नित कालिदि कूल कदम्ब कि डारन ।

अथवा

सभ्य समागम के प्रतिकूल न मूढ़, भयानक चाल चला कर ।
वञ्चक, बान बिसार, बुरी रच दंभ किसी कुल को न छला कर ।
देख त्रिभूति महाजन को पढ़ शोक-हुताशन में न जला कर ।
शङ्कर को भज रे भ्रम को तज रे भव का भरपूर भला कर ।
(नाथूराम शङ्कर)

१. पूर्वाक्षर को गुरु नहीं करता ।

२. तो, ३. लघुवत् पदो, ४. रो ।

अथवा

हे हरि जू बिछुरे तुमरे नहिं धारि सकी सु कऊ विधि धीरहिं ।
 आखिर प्रा^१न तजे दुख सों न सम्हारि सकी व^१ बियोग कि पीरहिं ।
 पै 'हरिचन्द' महा कलकानि कहानि सुनाउँ कहा बलबीरहिं ।
 जानि महा गुन रूप कि रासि न प्रा^१न तज्यो^१ चह वाकु सरीरहिं ।
 (हरिश्चन्द्र, प्रेम-माधुरी)

अतिकृति जाति

पच्चीस अक्षरों के छन्द (भेद ३३५५४४३२)

सुन्दरी

सगणाष्टक अन्त गुरु-युग जो तब 'सुन्दरि' छन्द बनै 'सुखदानी' ।
 सुन्दरी सवैये के प्रत्येक चरण में आठ सगण और एक गुरु के क्रम से
 पच्चीस वर्ण होते हैं । जैसे—

मन चंचल और नपुंसक है हम भांति विचार बसीठ बनाया ।
 वह पास गया जिसके उसने रस खेल खिलाय वहीं विरमाया ।
 निसि बीत चुकी पर भामिनि को अबलौं कवि शंकर साथ न लाया ।
 पढ़ पाठ महामुनि पाणिनि के हम ने फल हाय ! भयानक पाया ।
 (नाथूराम शंकर)

अथवा

सुख शान्ति रहे सब ओर सदा अविवेक तथा अघ पास न आवें ।
 गुणशील तथा बल बुद्धि बड़े हठ चैर विरोध घटें मिटें जावें ।

१. संयुक्त होने पर भी पूर्वार्ध को गुरु नहीं करता । २. वा ।

सब उन्नति के पथ में विचरें रति-पूर्व परस्पर पुण्य कमावें ।
 दृढ़ निश्चय और निरामय होकर निर्भय जीवन में जय पावें ।
 (छन्द रत्नावली)

अथवा

हम दीन दरिद्र हुताशन में दिन रात पड़े दहते रहते हैं ।
 बिन मेल विरोध महानद में मन बोहित से बहते रहते हैं ।
 कवि शंकर काल कुशासन की फटकार कबी सहते रहते हैं ।
 पर भारत के गत-गौरव की अनुभूत कथा कहते रहते हैं ।
 (नाथूराम शंकर)

उत्कृति जाति

छब्बीस अक्षरों के छन्द (भेद ६७१०८८६४)

कुन्दलता

यदि आठ सकार रु अन्त लसैं लघु दो तब 'कुन्दलता' मनमोहन ।
 यदि एक चरण में आठ सगण और दो लघु हों तब कुन्दलता नामक
 सवैया बनता है । जैसे—(एक ही चरण)
 सब सों ललुआ ! मिलिकै रहियै मम जीवन-मूरि सुनौ मनमोहन ।
 इत्यादि—
 (छन्दःप्रभाकर)

वर्ण-दण्डक-प्रकरण

जिन छन्दों में छब्बीस अक्षरों से अधिक अक्षर होते हैं उनको दण्डक कहा जाता है, क्योंकि उनके पाद दण्ड के समान लम्बे होते हैं ।
 दण्डक दो प्रकार के होते हैं—साधारण दण्डक, और मुक्तक दण्डक ।
 साधारण दण्डक वे छन्द होते हैं जिनमें समवृत्तों के समान गणों का क्रम

निश्चित होता है। मुक्तक दण्डक वे छन्द होते हैं जिनमें गणों की कोई व्यवस्था नहीं होती, केवल कहीं-कहीं गुरु-लघु अक्षर रखने का नियम होता है।

साधारण दण्डकों का प्रयोग कवियों ने बहुत नहीं किया है। परिचय-मात्र करवाने के लिये हम यहाँ उनके कुछ भेद और उदाहरण देते हैं।

साधारण दण्डक

चण्डवृष्टिप्रपात

युगल नगण सात रा सों लसै चण्डवृष्टिप्रपातानुकारी शुभं दण्डकम् ।
दो नगण और सात रगणों के क्रम से इस छन्द में सत्ताईस वर्ण होते हैं। एक चरण का उदाहरण देखिए—

भजहु सतत राम सीता महामन्त्र, जासों महा कष्ट तेरो नसै मूल तें ।
(छन्दःप्रभाकर)

मत्तमातङ्गलीलाकरम्

रेफ हों नौ जबै तौ कहैं छन्दतत्वावबोधी उसे मत्तमातङ्गलीलाकरम् ।

इस छन्द में नौ रगणों के क्रम से सत्ताईस अक्षर होते हैं। यदि दस या ग्यारह रगण या इससे भी अधिक रगण रखे जायें तो भी इस छन्द का नाम यही होगा। सत्ताईस अक्षरों वाले इस छन्द के एक चरण का उदाहरण देखिये—

योग जाना नहीं यज्ञ दाना नहीं वेद माना नहीं या कली माहिं
मीता ! कहूँ । (छन्दःप्रभाकर)

कुसुमस्तवक

सगणा यदि नौ तब दण्डक हो 'कुसुमस्तवक' प्रिय जो कविमण्डल को ।

जिस छन्द में नौ सगण या इससे अधिक सगण हों उसे कुसुमस्तवक कहा जाता है। नौ सगणों वाले इस छन्द के एक चरण का उदाहरण देखिए—

जगदम्ब ! जरा करुणा कर दो निबली पर-पीड़ित दीन-दुखी हम हैं ।

(छन्दःप्रभाकर)

मुक्तक दण्डक

मुक्तक से भाव है कि कवि इन छन्दों में गणों के बन्धन से मुक्त रहता है। इन छन्दों में अक्षरों की संख्या तो नियत होती है पर गणों के क्रम का कोई नियम नहीं होता। हाँ, कहीं-कहीं गुरु और लघु का नियम अवश्य होता है। नीचे मुख्य-मुख्य मुक्तक दण्डकों के लक्षण और उदाहरण दिये जाते हैं।

घनाक्षरी

३१ वर्णों का मुक्तक दण्डक

इस छन्द में इकतीस वर्ण होते हैं। अन्तिम वर्ण गुरु होना चाहिए। सोलहवें अक्षर पर तथा ३१वें वर्ण पर यति होती है। कवित्त शब्द का प्रयोग इसी छन्द के लिये किया जाता है। बड़े-बड़े कवियों ने इस छन्द में रचना की है। उदाहरण देखिए। एक चरण को दो-दो पंक्तियों में लिखा जाता है—

(क) नंगी पीठ बैठकर घोड़े को उड़ाऊँ कहो,
किन्तु डरता हूँ मैं तुम्हारे इस झूले से।
रोक सकता हूँ उरुओं के बल से ही उसे,
टूटे भी लगाम यदि मेरी कभी झूले से।

किन्तु क्या करूँगा यहाँ ? उत्तर में मैंने हँस,
और भी बढ़ाये पैग दोनों ओर ऊले-से ।
'है-है' कह लिपट गये थे यहीं प्राणेश्वर
बाहर से संकुचित, भीतर से फूले-से ।

अथवा

(ख) मैं निज अलिङ्ग में खड़ी थी सखि, एक रात,
रिमरिम बूँदें बबली थीं घटा छाई थी ।
गमक रहा था केतकी का गन्ध चारों ओर
फिखली-फनकार यही मेरे मन भाई थी ।
करने लगी मैं अनुकरण स्वनूपुरों से,
चंचला थी चमकी, घनाली बहराई थी ।
चौंक देखा मैंने, छुप कोने में खड़े थे प्रिय,
माई ! मुख-लज्जा उसी छाती में छिपाई थी !

अथवा

(ग) लाई सखि, आलिनें थीं डाली उस वार जब,
जम्बूफल जीजी ने लिये थे, तुझे याद है ?
मैंने थे रसाब्ज लिये, देवर खड़े थे वहीं,
हँसकर बोले उठे—'निज-निज स्वाद है ?'
मैंने कहा—'रसिक, तुम्हारी रुचि काहे पर ?'
बोले, 'देवि, दोनों ओर मेरा रस-बाद है,
दोनों का प्रसाद-भागी हूँ मैं' हाय, आली ! आज
विधि के प्रमाद से विनोद भी विषाद है !

(साकेत)

रूपघनाक्षरी

३२ वर्णों का मुक्तक दण्डक

रूपघनाक्षरी में ३२ वर्ण होते हैं । १६-१६ वर्णों पर यति होती है ।
अन्तिम दो वर्ण गुरु लघु होते हैं । उदाहरण में एक-एक चरण दो-दो
पंक्तियों में लिखा जाता है ।

कौन-सा दिखाऊँ दृश्य वन का बता मैं आज ?
हो रही है आलसि, मुझे चित्र-रचना की चाह—
नाला पड़ा पथ में किनारे जेठ-जीजी खड़े,
अम्बु अवगाह आर्यपुत्र ले रहे हैं थाह ?
किंवा वे खड़ी हों घूम प्रभु के सहारे आह,
तलवे से कण्टक निकलाते हों ये कराह ?
अथवा मुकाये खड़े हों, ये लता और जीजी
फूल ले रही हों, प्रभु दे रहे हों, वाह वाह ?

(साकेत)

अथवा

उमड़-धुमड़ घन आवत अटान ओट,
छुन घन जोति छुटा छटकि-छटकि जात ।
सोर करें चातक चकोर पिक चहूँ ओर
मोर ग्रीव मोरि मोरि मटकि मटकि जात ।
सावन लौं आवन सुनो है घनश्याम जू को
आँगन लौं आय पाय पटकि-पटकि जात ।
हिये विरहानल की तपनि अपार उर
हार गज मोतिन के चटकि-चटकि जात ।

(छन्दरत्नावली)

अथवा

स्वच्छतर अम्बर में झुन कर आ रहा था
स्वादु-मधु-गंध से सुवासित समीर-सोम,
त्यागी प्रेम-याग के ब्रती वे कृती जायापती
पान करते थे गल बाँह दिये, आपा होम ।
क्षुद्र कास-कुश से लगाकर समुद्र तक
मेदिनी में किसका था मुदित न रोम-रोम ।
समुदित चन्द्र किरणों का चौँर ढारता था
आरती उतारता था दिव्य दीप वाला व्योम ।

(साकेत)

जलहरण

इस छन्द में भी रूपधनाक्षरी की तरह बत्तीस वर्ण होते हैं । यति भी उसी छन्द की तरह १६-१६ वर्ण पर होती है । केवल अन्तर यह है कि इसके अन्तिम दो वर्ण लघु होते हैं । जैसे (दो पंक्तियों में एक चरण) :

लेकर पवित्र नेत्रनीर रघुवीर धीर
वन में तुम्हारा अभिषेक करें आओ तुम,
व्योम के वितान तले चन्द्रमा का छत्र तान,
सच्चा सिंह-आसन बिछा दें, बैठ जाओ तुम ।
अर्घ्यपाद्य और मधुपर्क यहाँ भूरि-भूरि,
अतिथि समादर नवीन नित्य पाओ तुम,
जंगल में मंगल मनाओ, अपनाओ देव,
शासन जनाओ, हमें नागर' बनाओ तुम । (साकेत)

अथवा

कब से तुम्हारी राह दिन रात देखता हूँ,
दयाघन ! दया कर दया दिखलाओ तुम ।
यह तो बतलाओ तुम छिपे किस लोक में,
आओ शीघ्र मुझे मत और तरसाओ तुम ।
राधा के सहित करो मेरे उर में निवास,
और सब मेरी भव-बाधा को मिटाओ तुम ।
जाऊँ मैं कहाँ गोपाल शरण तुम्हारी छोड़,
नाम के ही नाते अब मुझे अपनाओ तुम ।

(गोपालशरण सिंह)

देवघनाक्षरी

३३ वर्णों का मुक्तक दण्डक

देवघनाक्षरी के प्रत्येक पाद में ३३ वर्ण होते हैं । यति ८, ८, ८ और ६ पर होती है । इसके अन्तिम तीन वर्ण लघु होते हैं । जैसे (दो पंक्तियों में एक चरण)

फिलखी फनकारैं पिक, चातक पुकारैं बन,
भोरनि गुहारैं उठै, जुगनू चमकि-चमकि ।
घोर घनघोर भोर घुस्वा धुरारे धाम
धूमनि मचावै नाचै दामिनी दमकि-दमकि ।
भूकनि बयार बहै लूकनि लगावै अंक
हूकनि भभूकिन को उर में खमकि-खमकि ।
कैसे करि राखौ प्राण प्यारे जसबन्त विन
नान्हीं-नान्हीं बूँद करै मेघवा कमकि-कमकि ।

अर्धसमवृत्त प्रकारण

जिस वर्णवृत्त में पहला और तीसरा चरण सम हो और दूसरा और चौथा चरण सम हो—अर्थात् गण क्रम और वर्ण-संख्या परस्पर मिलती हो वह अर्धसमवृत्त कहलाता है। नीचे अर्धसम वृत्तों के कुछ लक्षण और उदाहरण दिये जाते हैं। इन छन्दों का अधिकतर प्रयोग संस्कृत में ही पाया जाता है।

अपरवक्त्र

अपरवक्त्र के पहले और तीसरे चरण में नगण, नगण, रगण, लघु और गुरु होते हैं और दूसरे और चौथे चरण में नगण, जगण, जगण और रगण होते हैं। जैसे—

रह चिर दिन तू हरी-भरी
बढ़, सुख से बढ़ सृष्टि-सुन्दरी,
सुध 'प्रियतम की मिले मुझे,
फल जन-जीवन-दान का तुझे।

(साकेत)

सुन्दरी

सुन्दरी छन्द के प्रथम और तृतीय पाद में सगण, सगण, जगण और एक गुरु होता है तथा दूसरे और चौथे पाद में सगण, भगण, रगण लघु और गुरु होता है। जैसे—

(क) अब भी वह वाटिका वहाँ
पर बैठी यह ऊर्मिला यहाँ।

१. पूर्वार्धर को गुरु नहीं बनाता।

करुणाकृति माँ बिसूरती,
गिरिजा भी बन मूर्ति घूरती ।

अथवा

(ख) जननी इस सौध-धाम में
उनके ही शुभ-सौख्य-काम में ।
करतीं कितने प्रयोग थीं,
रचतीं व्यंजन-बाल-भोग थीं ।

अथवा

(ग) जिस आत्मज युग्म के बिना
अपना जीवन ^१त्याज्य ही गिना,
वह भी मुनि को दिया, दिया,
कितना दुष्कर तात ने किया । (साकेत)

मंजुमाधवी

जिस वृत्त के पहले और तृतीय पाद में इन्द्रवंशा का लक्षण और दूसरे और चौथे पाद में इन्द्रवज्रा का लक्षण मिलता हो, अर्थात् विषम चरणों में बारह अक्षर और सम चरणों में ग्यारह अक्षर हों, उसे मंजुमाधवी कहते हैं । जैसे—

लेते गये क्यों न तुम्हें^१ कपोत, वे,
गाते सदा जो गुण थे तुम्हारे ?
छाते तुम्हीं^१ हा ! प्रिय-पात्र-पोत वे,
दुःखाब्धि में जो बनते सहारे । (साकेत)

विषमवृत्त प्रकरण

जिस वर्णवृत्त में न समवृत्त का और न ही अर्धसमवृत्त का लक्षण घटे वह विषमवृत्त कहलाता है । विषमवृत्तों के चारों चरण एक-दूसरे से भिन्न हो सकते हैं, अथवा उनमें चार-चार चरणों की अपेक्षा न्यून या अधिक

१. पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता ।

चरण रखे जा सकते हैं। हिन्दी में इन छन्दों का प्रयोग अधिक नहीं होता। परिचय के लिए नीचे कुछ लक्षण और उदाहरण दिये जाते हैं।

सौरभक

सौरभक छन्द के प्रथम चरण में सगण, जगण, सगण और लघु, द्वितीय चरण में नगण, सगण, जगण और गुरु, तृतीय चरण में रगण, नगण, भगण और गुरु तथा चतुर्थ चरण में सगण, जगण, सगण, जगण और गुरु होते हैं। जैसे—

सब 'स्यागिये असत काम।

शरण गहिए सदा हरी।

सर्व सुख भव जायँ टरी।

भजिये अहो निशि हरी-हरी-हरी।

(छन्दः प्रभाकर)

आपीड़

आपीड़ छन्द के प्रति चरण में क्रमशः आठ, बारह, सोलह और बीस अक्षर होते हैं, अर्थात् प्रति चरण चार-चार वर्ण बढ़ते जाते हैं। प्रत्येक पाद के अन्त में दो वर्ण गुरु होते हैं; और शेष वर्ण लघु होते हैं। जैसे—

प्रभु असुर सुहर्ता

जगविदित पुनि जगत भर्ता।

दनुज-कुल-अरि जगहित धरम-धर्ता

अस प्रभु कहँ सरवस तज भज भव-दुख-हर्ता।

(छन्दःप्रभाकर)

मिलिन्दपाद^२

जिन पद्यों में छः-छः पाद हों उन्हें मिलिन्दपाद कहा जाता है। ये विषमवृत्तों में इसलिए गिने जाते हैं, क्योंकि इनमें चार-चार चरणों की

१. पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता।

२. मिलिन्द अमर को कहते हैं, जिसकी छः टाँगें होती हैं। षट्पद भी उसे इसीलिए कहा जाता है।

अपेक्षा अधिक चरण हैं। ये मिलिन्दपाद छन्द कोई स्वतन्त्र छन्द नहीं हैं। सम-वृत्त छन्दों में दो पंक्तियाँ उसी छन्द की और जोड़कर ये वृत्त बना लिये जाते हैं, और उन्हीं समवृत्त छन्दों के आधार पर इनका नाम रक्खा जाता है। जैसे प्रमाणिका समवृत्त के छः पाद जिस छन्द में होंगे उसे हम प्रमाणिका-मिलिन्दपाद कहेंगे। कुछ छन्दों के लक्षण और उदाहरण नीचे दिये जाते हैं।

भुजङ्गप्रयात-मिलिन्दपाद

इस छन्द में भुजङ्गप्रयात नामक बारह वर्णों के समवृत्त के छः पाद होते हैं। जैसे—

अजन्मा न आरम्भ तेरा हुआ है,
 किसी से नहीं जन्म मेरा हुआ है।
 रहेगा सदा अन्त तेरा न होगा,
 किसी काल में नाश मेरा न होगा।
 खिलाड़ी खुला खेल तेरा रहेगा,
 मिटेगा नहीं मेल मेरा रहेगा। (छन्दःशिक्षा)

पञ्चचामर-मिलिन्दपाद

पञ्चचामर—मिलिन्दपाद का प्रत्येक चरण पञ्चचामर नामक सोलह अक्षरों के समवृत्त छन्द का होता है। जैसे—

चलो अभीष्ट मार्ग में सहर्ष खेलते हुए,
 विपत्ति विघ्न जो पढ़ें उन्हें ठकेलते हुए।
 घटे न हेल-मेल हों बदे न भिन्नता कभी।
 अतर्क एक पन्थ के सतर्क पन्थ हों सभी।
 तभी समर्थ भाव है कि तारता हुआ तरे,
 वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए मेरे।

(छन्दः शिक्षा)

१. संयुक्त होने पर भी पूर्वाक्षर के दीर्घ नहीं करता।

तीसरा अध्याय

जाति

सम मात्रा छन्द प्रकरण

एक मात्रा से दस मात्राओं तक के छन्द व्यवहार में प्रायः कम आते हैं। यहाँ उन्हें छोड़ दिया गया है। इस अध्याय में ग्यारह मात्राओं के तथा उनसे आगे के छन्दों के उदाहरण और लक्षण दिये जाते हैं।

रौद्र जाति

ग्यारह मात्राओं का छन्द (भेद १४४)

अहीर

शिव^१ कल कहत 'अहीर', अन्त ज-युत मतिधीर।

'अहीर' छन्द में ग्यारह मात्राएँ होती हैं। अन्त में जगण होता है।
जैसे—

सुरभित मन्द बयार

सरसे सुमन सुभार।

गूँज रहे मधुकार

धन्य वसन्त बहार।

(मैथिलीशरण गुप्त)

अथवा

यहीं बसें हम यार

कौन चले उस पार।

अच्छा यही स्वदेश

रहना यहीं हमेश।

(प्यारेलाल शर्मा)

आदित्य जाति

बारह मात्राओं का छन्द (भेद २३३)

तोमर

तोमर तु द्वादश मत्त, गल अन्त में हो धत्त !

तोमर छन्द में बारह मात्राएँ होती हैं और अन्त में क्रमशः गुरु लघु होते हैं । जैसे—

प्रस्थान वन की ओर
या लोक मन की ओर ।
होकर न धन की ओर
हैं राम जन की ओर ।

(छन्दःशिक्षा)

अथवा

मुख में मधुर उच्चार
कर में सदा उपकार ।
रखते हृदय में प्रीति
है सुजन की यह रीति ।

(रामनरेश त्रिपाठी)

अथवा

सुनि रामचन्द्र कुमार ।
धनु आनिये यहि बार ।
पुनि वेगि ताहि चढ़ाव ।
यश लोक-लोक बढ़ाव ।

(रामचन्द्रिका)

भागवत जाति

तेरह मात्राओं के छन्द (भेद ३७७)

उल्लाला

उल्लाला तेरह कला, एकादशवां लघु भला ।

उल्लाला छन्द में तेरह मात्राएँ होती हैं । ग्यारहवीं मात्रा इसमें सदा

लघु रहती है। पाद के अन्त में गुरु लघु रखने का कोई नियम नहीं।
जैसे—

(क) होना मत व्याकुल कहीं,
इस भवजनित विषाद से।
अपने आग्रह पर अटल,
रहना बस प्रह्लाद से।

अथवा

(ख) जीवन में बस प्रेम ही
जिसका प्राणाधार हो।
सत्य गले का हार हो
इतना उस पर प्यार हो।

अथवा

(ग) दुख में भी सुख शान्ति का
तब अनुभव हो जायगा।
प्रेमसलिल से द्वेष का
सारा मल धो जायगा।

(पं० गयाप्रसाद शुक्ल)

नोट—उल्लाल नामक एक छन्द और भी है, जिसे मात्रिक अर्धसम
छन्दों के प्रकरण में देखना चाहिए।

मानव जाति

सखि

चौदह मात्राओं के छन्द (भेद ६१०)

चौदह कल 'सखी' बनाओ, मा या ही अन्त सजाओ।

सखी छन्द में १४ मात्राएँ होती हैं, अन्त में मगण या यगण होता
है। जैसे—

(मगण वाले उदाहरण)

- (क) उछ्वास और आँसू में ।
विश्राम थका सोता है ।
रोई आँखों में निद्रा ।
बनकर सपना होता है ।

अथवा

- (ख) फिर विश्व माँगता होवे ।
ले नभ की खाली प्याली ।
तुम से कुछ मधु की बूँदें ।
लौटा लेने को लाती । (जयशंकर प्रसाद)

(यगण वाले उदाहरण)

- (क) क्यों छलक रहा दुख मेरा
ऊषा की मृदु पलकों में ।
हाँ ! उलझ रहा सुख मेरा
संध्या की घन अलकों में ।

अथवा

- (ख) संध्या की मिलन 'प्रतीक्षा'
कह चलती कुछ मनमानी ।
ऊषा की रक्त निराशा,
कर देनी अन्त कहानी । (जयशंकर प्रसाद)

एक ही पद्य में मगण यगण दोनों भी रक्खे जा सकते हैं । जैसे—

आश्चर्य-भाव में भूले
अनुराग-बाग के माली ।
क्यों ध्यानमग्न तुम बैठे

भरकर फूलों से डाली । (गुलाबरसन बाजपेयी)

यहाँ तीसरे चरण के अन्त में यगण है । शेष स्थानों पर मगण ।

१. पूर्वोक्त को गुरु नहीं करता ।

अथवा

- (क) या निशि ने काली साड़ी
में जो पुखराज जड़ाये ।
वे ही हैं दमक रहे क्या
अपना प्रकाश फैलाये^१ ?

अथवा

- (ख) या किसी देव-बाला का
ये कण्ठहार जो टूटा ।
उसके ही मुक्ताओं का
दिखता यह वैभव अनूठा ? (बाबूलाल भार्गव)

इन पद्यों में भी मगण और यगण दोनों का ही प्रयोग है ।

हाकलि

त्रै चौकल गुरु 'हाकलि' है

'हाकलि' छन्द में चौदह मात्राएँ होती हैं । इसमें तीन चौकलों के बाद एक गुरु रक्खा जाता है । चौकल से अभिप्राय चार मात्रा वाले समुदाय का है, जैसे ऊपर लिखे लक्षण के चौकल यों बनते हैं त्रैचो + कल-गुरु + हाकलि । चौकल ५ प्रकार के हो सकते हैं ५५, ॥॥, ५॥, ॥५ और ॥५ ।

उदाहरण देखिये—

या प्रेमी की आशा की
ये^२ चिंगारी अलबेली ।
प्रतिपल जलकर फिर बुझ रे !
करती हैं नव अठखेली ।

(बाबूलाल भार्गव)

१. जुगनुओं पर उत्प्रेक्षा है ।

२. जुगनुओं के प्रति कहा है ।

अथवा

(क) पावन-कारन जीवन का
मुझको वास मिला वन का ।
जाता हूँ मैं अभी वहाँ
राज्य करेंगे भरत यहाँ ।

(ख) भाव-सुरभि का सदन अहा !
अमल कमल-सा वदन अहा !
अधर छुबीले छदन अहा !
कुन्द कली से रदन अहा !

(मैथिलीशरण गुप्त)

अथवा

जग पीडित है अति दुख से
जग पीडित रे अति सुख से ।
मानव जग में बँट जावें
सुख दुख से औ' दुख सुख से ।

(सुमित्रानन्दन पन्त)

जहाँ चौकलों का नियम पूरा नहीं किया जाता वहाँ इसी छन्द को
'मानव' कहते हैं । जैसे—

(क) साँप खिलाती थीं अलकें
मधुप पालती थीं पलकें ।
और कपोलों की झलकें
उठती थीं छवि की झलकें !

(ख) मंझली माँ ! तू मरी न क्यों ?
लोक-लाज से डरी न क्यों ?
लक्ष्मण ने निःश्वास लिया,
माँ के जान सु-वास लिया ।

(ग) सीता ने सोचा मन में
‘स्वर्ग’ बनेगा अब बन में ।
धर्मचारिणी हूँगी मैं,
बन विहारिणी हूँगी मैं ।

यहाँ (क) और (ख) पद्यों के दूसरे चरण के आदि में (ग) पद के तीसरे और चौथे चरण के आदि में चौकल नहीं पड़ते हैं ।

विजात

चतुर्दश हों कला इसमें
प्रथम अक्षर लघू इसमें

‘विजात’ छन्द में चौदह मात्राएँ होती हैं तथा पाद के आदि का अक्षर लघु होता है । जैसे—

अपने जाने गाता हूँ
निशि-दिवस मैं गीत नवीन ।
हृदय बैठ पर जाता है
जब पाता सब प्राचीन ।

(प्यारेलाल शर्मा)

अथवा

(क) समझो मुझको भिन्न न हा !
करो ऐक्य उच्छिन्न न हा !
तुमको दुख तो मुझको भी,
तुमको सुख तो मुझको भी ।

(ख) सबके हित मैं बन में भी
निर्जन सघन गहन में भी ।
सब व्रत नियम निबाहूँगी
सबका मंगल चाहूँगी ।

(मैथिलीशरण गुप्त)

अथवा

चरित है मुख्य जीवन का

वचन प्रतिबिम्ब है मन का ।

सुयश है आयु सज्जन की

सुजनता है प्रभा धन की ।

विशेष—वास्तव में यह छन्द कोई स्वतन्त्र छन्द नहीं है । हाकलि या मानव छन्दों के पाद के आदि के वर्ण को लघु कर देने भर से विजात छन्द बन जाता है ।

तैथिक जाति

पन्द्रह मात्राओं के छन्द (भेद ६८७)

चौबोला

पन्द्रह कल चौबोला सजे

अन्त लघू गुरु सुषमा भजे ।

‘चौबोला’ छन्द में पन्द्रह मात्राएँ होती हैं । पाद के अन्त में लघु और गुरु होते हैं । जैसे—

(क) इस जगत में कुछ काम करें
प्रेम नहीं तो संप्राम करें ।
कुछ न कुछ तो है अब करना
साँसें ले अब नहीं जलना ।

(ख) जीने के द्वित न पाप करो ।
स्वार्थ तज के जग ताप हरो ।

१. पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता ।

किसी को भी उपदेश न दो—
किसी को भी दुख-बोश न दो ।

(प्यारेलाल शर्मा)

अथवा

मित्र सफल निज जीवन करो,
हृदय बीच शुभ गुण गण धरो ।
गैल सदा उन्नति की गहो ।
मेता बन समाज में रहो ।

(रामनरेश त्रिपाठी)

गुपाल

पन्द्रह अन्ते जगण गुपाल

गुपाल छन्द में पन्द्रह मात्राएँ होती हैं । पाद के अन्त में जगण होता है । जैसे—

इसके आगे ? बिदा विशेष;
हुए दूषति फिर अनिमेष ।
किन्तु जहाँ है मनोनियोग,
वहाँ कहीं का विरह वियोग ?

(मैथिलीशरण गुप्त)

अथवा

कहा तब उसे किसी प्रकार
अब छोड़ो भगवाँ इस बार ।
रक्खोगे यदि यों व्यवहार
सबका होगा तब अपकार ।

(प्यारेलाल शर्मा)

जयकरी

तिथि कल सोह जयकरी छन्द

अन्त गुरु लघु देत अनन्द

जयकरी छन्द में पन्द्रह मात्राएँ होती हैं। अन्त में कमशः गुरु और लघु होते हैं, जैसे—

चहुहु जु साँचो निज कल्यान

तौ सब मिलि भारत-सन्तान ।

जपहु निरन्तर एक जवान,

हिन्दू, हिन्दी हिन्दुस्तान ।

(प्रतापनारायण मिश्र)

अथवा

- (क) करके शिक्षा-कार्य समाप्त,
विद्यालय की पदवी प्राप्त ।
फिर तुम ग्राम में कर वास,
ग्रामीणों का करो विकास ।

अथवा

- (ख) आँखें मूँद न पीटो लीक,
सोच समझ देखो तुम ठीक ।
करो न असमय का आलाप
जो तुमको ही रुचे न आप ।

(मैथिलीशरण गुप्त)

संस्कारी जाति

सोलह मात्राओं के छन्द (भेद १५६७)

चौपाई

कल सोलह जत अन्त न दीजै ।

चौपाई छन्द में १६ मात्राएँ होती हैं, तथा पाद के अन्त में जगण

और तगण कभी नहीं रखे जाते, अर्थात् पादान्त में गुरु लघु कभी नहीं रखे जाते ।

चौपाई में समकल के बाद समकल ही रखना चाहिए । यदि विषम-कल आ जाए तो एक और विषम कल रख देने से लय ठीक हो जाती है । यदि समकल के बाद एक ही विषम कल रहने दिया जायगा तो चौपाई छन्द न बन सकेगा ।

समकल से भाव दो मात्रा युक्त या चार मात्रा युक्त अक्षरसमूह से है और विषमकल से भाव (तीन मात्रा वाले तथा पाँच मात्रा वाले अक्षर-समूह से है । जैसे यश और अपयश समकल हैं तथा जोग और विहारी विषमकल हैं । नीचे लिखे उदाहरणों से यह बात स्पष्ट हो जायगी ।

उदाहरण—

काम कोह मद मान न मोहा
लोभ न छोभ न राग न द्रोहा ।
जिनके कपट दम्भ नहिं भाया,
तिनके हृदय बसहु रघुराया ॥

(तुलसी)

यहाँ प्रथम पाद के आदि में एक त्रिकल (काम) है । उसके आगे एक और त्रिकल (कोह) रख देने से लय ठीक बन गई है । आगे :
मा + नन + मो + हा) चल पड़े हैं ।

अन्य उदाहरण—

(क) तुम्हहिं छौंढि मति दूसर नाही ।
राम बसहु तिन्हके मन माहीं ॥
जननी सम जानहिं पर नारी ।
धनु पराव विष ते विष भारी ॥

१. पूर्वाक्षर को दीर्घ नहीं करता ।

- (ख) जे हरेषहिं पर सम्पति देखी
 दुखित होहिं पर विपति बिसेखी।
 तिन्हहिं^१ राम तुम प्रान पियारे ।
 तिन्ह^१ के मन सुभ सदन तुम्हारे॥
- (ग) अवगुन तजि सबके गुन गहहीं
 धिप्र धेनु हित संकट सहहीं ।
 नीति निपुन जिन्ह^१ कई जग लीका
 घर तुम्हार तिन्ह^१ कर मनु नीका ॥

(तुलसी)

पादाकुलक

चौकल चार जहाँ पर आनो
 छन्दसु पादाकुलक बखानो ।

पादाकुलक छन्द के प्रत्येक पाद में चार-चार चौकल होते हैं । चौकल की व्याख्या १४ मात्रा वाले हाकलि छन्द के लक्षण में कर दी गई है । उदाहरण देखिए—

- (क) छोटे छोटे, घन के टुकड़े
 घूम रहे थे नभमंडल में ।
 मलिना छाया पतित हुई थी
 प्रायः जल के अंतःतल में ।
- (ख) अरुणे अरुणिमा देख रही थी
 पर था कुछ परदा सा डाला ।
 छिक छिक करके भी क्षिति-तल पर
 फैल रहा था अब उजियाला ।

(अयोध्यासिंह उपाध्याय)

१ पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता ।

विशेष—

पादाकुलक छन्द चौपाई का ही एक भेद है कोई स्वतंत्र छन्द नहीं । इन दोनों के पाद परस्पर मिल जाते हैं । भेद केवल इतना है कि पादाकुलक में चार चार चौकल होने चाहिएँ । चौकलों का यह बंधन चौपाई में नहीं । दूसरे चौपाई के अंत में गुरु लघु नहीं आ सकते, पर पादाकुलक के अंत में ये आ सकते हैं । (देखो आगे पादाकुलक का एक भेद पद्धति जिसके अंत में जगण रखने का नियम है) ।

छंदःशास्त्र के पंडितों ने पादाकुलक के कई सूक्ष्म भेद कर दिए हैं । जैसे, जिस पादाकुलक के पादांत में यगण अथवा दो लघु आवें और किसी भी पाद में जगण न आवे उसका नाम 'अरिल्ल' रख दिया है । उदाहरण देखिए—

क्या क्षण क्षण में चौक रही मैं ?
सुनती तुझसे आज यही मैं ।
तो सखि, क्या जीवन न जनाऊँ ?
इस क्षणदा को विफल बनाऊँ ?

(मैथिलीशरण गुप्त)

अथवा

ले हरिनाम मुकुन्द मुरली,
राधावल्लभ कुञ्जबिहारी ।
बानन दलन निपुण जगवन्दन,
गोपीवल्लभ कालिय-कन्दन ।

(छन्दःशिक्षा से लेकर परिचर्चित)

दूसरा भेद

पद्धति

जिस पादाकुलक के पादांत में जगण आता हो और आठ-आठ अक्षरों

१. पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता ।

पर यति पड़ती हो, उसे पद्धरि कह दिया जाता है, जैसे—

वे मृदुल मृदुल हैं याद डाल,
जिन पर बीता था बाल-काल ।
थे मौर युक्त वे छदन लाल,
कैसे भूलूँगा वे रसाल ।

(गोविन्द दास)

मत्तसमक

जिस पादाकुलक के प्रत्येक पाद की नवीं मात्रा लघु रखी जावे और पादांत में गुरु हो उसे मत्तसमक कहा जाता है (मात्रासमकं नवमो लघोऽन्त्यः शुत्तरत्नाकर) जैसे—

न तोरणों पर न मञ्च पर ही,
अनेक वादित्र बज रहे थे ।
जहाँ तहाँ उच्च-भूमि पर भी,
नवल-नगारे गरज रहे थे ।

(अयोध्यासिंह उपाध्याय)

पदपादाकुलक

कल दु आदि पदपादाकुलके ।

पदपादाकुलक छंद में सोलह मात्राएँ होती हैं । इसके आदि में नियम से एक द्विकल (५ या ॥) होता है । आदि द्विकल के अनंतर शेष चौदह मात्राएँ चौपाई में की तरह सम के अनंतर सम आती चली जाएँ । यदि कहीं कोई विषमकल आजाए तो उसके बाद एक और विषमकल रखकर समता स्थापित कर लेना चाहिए । जैसे—

(क) इसलिए न इतना सोच करो,
अब भी आशा है, धैर्य धरो ।
बोली ऊर्मिला विषादमयी,
सब गया हाथ आशा न गई ।

(ख) आशे, निष्फल भी बनी रहो,
तुम हो हीरे की कनी अहो !
रखती हो मूल्य मार कर भी,
उज्ज्वल हो अन्धकार कर भी !

(ग) अब भी सुलझये, आशा है ?
यदि है विश्वास—विनाशा है ।
लौटेंगे क्या प्रभु और बहन ?
उनके पीछे हा ! दुःखदहन !

(मैथिलीशरण गुप्त)

पादाकुलक की तरह पदपादाकुलक भी एक तरह की चौपाई ही है । भेद केवल यही है कि इसके आदि में द्विकल अवश्य रक्खा जावेगा, उसके अनन्तर यदि त्रिकल आवे तो एक और त्रिकल रख दिया जावेगा, परंतु चौपाई के आदि में भी त्रिकल आ सकता है और उसके बाद फिर एक त्रिकल रख दिया जाता है । इसके आदि में त्रिकल नहीं रक्खा जा सकता ।

शृङ्गार

त्रिकल आदि पुनि द्विकल सुधार,
अन्त ग ल धारो पद शृङ्गार ।

शृङ्गार छन्द के प्रत्येक पाद में १६ मात्राएँ होती हैं । प्रत्येक पाद के आदि में त्रिकल और द्विकल रखे जाते हैं और पादान्त में गुरु और लघु । जैसे—

(क) भरत को करके घर से त्याज्य,
राम को देते हैं नृप राज्य ।
भरत-से सुत पर भी सन्देह,
बुलाया तक न उन्हें^१ जो गेह ।

१. पूरुष को गुरु नहीं करता ।

अथवा

- (ख) छड़ाती है तू घर में कीच,
नीच ही होते हैं बस नीच ।
हमारे आपस के व्यवहार,
कहाँ से समझे तू अनुदार ।

अथवा

- (ग) हुआ भू कुञ्चित भाव विशाल,
कपोलों पर हिलते थे बाल ।
प्रकट थी मानो शासन-नीति,
मन्थरा सहमी देख सभीति ।

(मैथिलीशरण गुप्त)

अथवा

विकसते मुरझाने को फूल,
उदय होता छिपने को चन्द ।
शून्य होने को भरते मेघ,
दीप जलता होने को मन्द ।

(महादेवी वर्मा)

अथवा

पाप का क्षणिक प्रभाव विलोक,
लोभ यदि सके न कोई रोक ।
शोक तो उसकी मति पर शोक,
बना क्या, बिगड़ा जब प्रसन्नोक्त ॥

(छन्दःशिक्षा)

महासंस्कारी जाति

सत्रह मात्राओं के छन्द (भेद २५८४)

धीर

धीर में कल हो सप्तदश कान्त

धीर छन्द में सत्रह मात्राएँ होती हैं। प्रत्येक पाद में क्रमशः द्विकल, त्रिकल, चतुष्कल, त्रिकल तथा अन्त में सगण और लघु या अन्त में तगण होता है। इसमें जगण वाला चौकल कभी नहीं आता। जैसे—

(क) जब उमड़ना चाहिए आह्लाद,
हो रहा है क्यों मुझे भवसाद ?
निकट ज्यों^१ ज्यों आ रहा है गेह,
सिहरती है क्यों न जाने देह ?

(ख) कर रही सरयू जिसे कुछ रुद्ध,
बह रही है वायु-धारा शुद्ध।
पर किसे है आज इसकी चाह ?
भर रही यह आप ठण्डी आह !

(ग) तब कहा शत्रुघ्न ने भर आह—
था कहीं मेरा विचार-प्रवाह !
घर पहुँच कर, कल्पना के साथ,
हो रहा था मैं सहर्ष सनाथ।

(घ) क्या यही साकेत है जगदीश !
थी जिसे अलका झुकाती शीश।

१. पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता।

क्या हुए वे निश्च के आनन्द ?

शान्ति या अवसन्नता यह मन्द ।

(मैथिलीशरण गुप्त)

चन्द्र

मस्त दस सत रचो रुचिर चन्द्रम् ।

चन्द्र छन्द में सत्रह मात्राएँ होती हैं तथा १० और ७ पर यति होती है, जैसे—

(क) चाल वाले न कब, चले चालें ।

चोचलों साथ चल, पड़े आँसू ।

मनचलापन दिखा, दिखा अपना ।

मनचलों से मचल, पड़े आँसू ।

(ख) फेर में डालते, हमें जो थे ।

तो फिराये न क्यों, फिरे आँसू ।

जो किसी आँख से, गये गिर तो,

किस लिए आँख से, गिरे आँसू ।

(अयोध्यासिंह उपाध्याय)

पौराणिक छन्द (भेद-४१८१)

शक्ति

द्वितिक चौ तिकल पञ्च शक्ति सरन ।

शक्ति छन्द में क्रमशः दो तिकल, एक चौकल, फिर एक तिकल और पंचकल होते हैं । अन्त में सगण, रगण या नगण रहते हैं । इस छन्द में पहली, छठी, ग्यारहवीं और सोलहवीं मात्राएँ लघु रहती है, जैसे—

१. पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता ।

अरे उठ कि अब तो सबेरा हुआ ।
नहीं दूर तेरा अँधेरा हुआ ।
बहुत दूर करना तुझे है सफर ।
नहीं ज्ञात है राह घर की किधर ॥

(रामनरेश त्रिपाठी)

अथवा

शिवा शंभु के पाँव पंकज गहों,
विनायक सहायक सबै दिन चहों ।
भजौ राम आनन्द के कन्द को,
दिया जिन हुकुम पौन के नन्द को ।

(हनुमन्नाटक)

महापौराणिक छन्द (भेद ६७६५)

सुमेरु

कल उन्निस यान्तं, ल आदि सुमेरु ।

सुमेरु छन्द में उन्नीस मात्राएँ होती हैं । १० और ६ पर या १२ और ७ पर यति होती है । इसके आदि में लघु और अंत में यगण श्रुति-मधुर होता है । इस छन्द के अन्त में मगण, जगण, रगण तथा तगण का प्रयोग करना वर्जित है । जैसे—

(क) भरत को मार डालूँ, और तुझको,
नरक में भी न रक्खूँ, ठौर तुझको !
युधाजित आततायी, को न छोड़ूँ,
बहन के साथ भाई, को न छोड़ूँ ।

(ख) भरत को सानती है, आप में क्यों ?
पढ़ेंगे सूर्यवंशी, पाप में क्यों ?
हुए वे साधु तेरे, पुत्र ऐसे—
कि होता कीच से है, कब्ज जैसे ॥

(ग) चलो वे भी कि जो, हों बिघ्नकारी,
कहो तो लौट दूँ, यह भूमि सारी ?
खड़ा है पार्श्व में, लक्ष्मण तुम्हारे,
मरें आकर अभी, अरिगण तुम्हारे ।

पीयूषवर्ष

ल ग अन्ते यति दस, पीयूषवर्ष है ।

पीयूषवर्ष छन्द में उनीस मात्राएँ होती हैं । दस और नौ पर यति होती है । इसके अन्त में लघु और गुरु होते हैं । जैसे—

(क) स्वच्छ सुन्दर और, विस्तृत घर बनें,
हृन्मधनुषाकार, तोरण हैं तने ।
देव-दम्पति अट, देख सराहते
उतरकर विश्राम, करना चाहते ॥

(ख) एक ओर विशाल, वर्ण्य है जगा,
पार्श्व से प्रतिबिम्ब, जिसमें है जगा ।
मन्दिरस्था कौन, यह देवी भज्जा ?
किस कृती के अर्थ, है इसकी कज्जा ?

(ग) निरुपमे, पर चित्र, मेरा है कहाँ ?

‘प्रिय, तुम्हारा कौन, सा है पद यहाँ ?’
भावती, मैं भार, लूँ किस काम का ?
एक सैनिक मात्र, लक्ष्मण राम का ।

विशेष—

यदि दस और नौ पर यति न रखी जावे तो इसी छन्द का नाम आनन्दवर्धक हो जाता है । आनन्दवर्धक छन्द में अन्तिम गुरु के स्थान पर यदि दो लघु भी रख दिए जावें तो कोई हानि नहीं होती । जैसे—

१. पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता ।

(क) नाक का मोती अधर की कान्ति से

बीज दाहिम का समझकर भ्रान्ति से ।
देखकर सहसा हुआ शुक मौन है,
सोचता है, अन्य शुक यह कौन है ।

(ख) एक राज्य न हो, बहुत से हों जहाँ,
राष्ट्र का बल बिखर जाता है वहाँ ।
बहुत तारे थे, अँधेरा कब मिटा
सूर्य का आना सुना जब, तब मिटा ।

(ग) स्वर्ग की तुलना उचित ही है यहाँ,
किन्तु सुर-सरिता कहाँ, सरयू कहाँ ?
बह मरों को मात्र पार उतारती,
यह यहीं से जीवितों को तारती । (मैथिलीशरण गुप्त)
अथवा

हाय ! हमने भी कुलीनों की तरह
जन्म पाया प्यार से पाले गये ।
जी बचे फूले फूले तब क्या^१ हुआ
कीट से भी नीचतर माने गये । (रामचन्द्र शुक्ल)
महादेशिक छन्द (भेद १०६४६)

हंसगति

हंसगति बीस कला ग्यारह पर विरति ।

हंसगति छन्द में बीस मात्राएँ होती हैं। ग्यारहवें अक्षर पर यति रहती है। अन्त में दो वर्षे लघु हों तो लय ठीक रहती है। जैसे—

होते हैं छवि देख, विस्तोषन विकसित
होता है गुण देख, हृदय आनन्दित ।

१. पूर्वोत्तर को गुरु नहीं बनाता ।

प्रिय पर लगता नहीं, रूप से दुर्गुण,
कुरूपता को छिपा, डालता सद्गुण।

(श्री रामनरेश त्रिपाठी का कुछ परिवर्तित पद्य)

त्रैलोक्य जाति

इक्कीस मात्राओं के छन्द (भेद १७७११)

चान्द्रायण

चान्द्रायण पद अन्त, होत रगणा सदा

जगण धरो कल सात, बाद यति रुद्र पै।

चान्द्रायण छन्द में इक्कीस मात्राएँ होती हैं। ग्यारह और दस पर यति होती है। इसकी ग्यारहवीं मात्रा जगण की अन्तिम अवयव होनी चाहिए, अर्थात् ग्यारहवीं मात्रा पर जगण समाप्त होता हो, तथा पादांत में रगण होना चाहिए। जैसे—

(क) चित्रकूट तब तात, तुम्हारे योग्य है

जहाँ अचल सुख शांति, और आरोग्य है।

‘जो आज्ञा’ कह राम, सहर्ष प्रयाग से

चित्रकूट मग^२ ओर, चले अनुराग से।

(ख) कवे दाशरथि राम, आज कृतकृत्य है।

करता तुम्हें^१ प्रणाम, सपरिकर भृत्य है।

तुम्हारा^३ राम वृत्त आप ही काव्य है,

कोई कवि बन जाय, सहज सम्भाव्य है।

(मैथिलीशरण गुप्त)

१. पूर्वोक्त को गुरु नहीं बनाता।

२. मूल में ‘चित्रकूट की ओर’ है।

३. मूल में ‘राम तुम्हारा वृत्त है’।

महारौद्र २२ मात्राओं के छन्द (भेद २८६५७)

कुण्डल

बारह दस यति अन्ते, द्विगु कुण्डल होता ।

कुण्डल छन्द में बाईस मात्राएँ होती हैं । बारह और दस पर यति होती है । पाद के अन्त में दो गुरु रखे जाते हैं । जैसे—

सीतापति रामचन्द्र, रघुपति रघुराई
विहँसत मुख मन्द मन्द, सुन्दर सुखदाई ।
कीरति ब्रह्मण्ड खण्ड, तीन लोक छाई
हरखि निरखि तुलसिदास, चरणनि रज पाई । (तुलसी)

अथवा

मेरे मन राम नाम दूसरा न कोई
सन्तन ढिग बैठि बैठि, लोक लाज खोई ।
अब तो बात फैल गई जानत सब कोई
अँसुवन जल सीँचि सीँचि, प्रेम बेलि बोई । (मीरा)

राधिका

बाईस राधिका कला, सदा तेरह यति ।

राधिका छन्द में बाईस मात्राएँ होती हैं । १३ और नौ पर यति होती है । जैसे—

- (क) यह सच है तो अब लौट, चलो तुम घर को,
चौंके सब सुनकर अटल, कैकयी-स्वर को ।
सब ने रानी की ओर अचानक देखा,
वैधव्यतुषारावृता, यथा विधु-लेखा ।
- (ख) बैठी थी अचल तथापि असंख्य तरंगा,
वह सिंही अब थी हहा ! गोमुखी गंगा ।

हैं जनकर भी मैंने न, भरत को जाना,
 सब सुन लें तुमने स्वयं, अभी यह माना ।
 (ग) यह सच है तो फिर लौट चलो घर भैया,
 अपराधिन मैं हूँ तात्, तुम्हारी मैया ।
 दुर्बलता का ही धिक्, विशेष शपथ है,
 पर अबलाजन के लिये, कौन-सा पथ है ?

(मैथिलीशरण गुप्त)

बिहारी

बाईस बिहारी में कल, अरु यति चौदह ।
 बिहारी छन्द में बाईस मात्राएँ होती हैं । और चौदह तथा आठ पर
 यति पड़ती है । जैसे—

(क) लंका जलाय काज खलों, को सुम्ना दिया,
 मारे प्रचण्ड दुष्ट दिया, भी बुम्ना दिया ।
 हनुमान बली वीर वरों, में प्रधान है,
 महिमा अखण्ड ब्रह्मचर्य, की महान् है ।
 (ख) भूला न किसी भांति कहीं, ठेक ठिकाना,
 माना मनोज का न कहीं, ठीक ठिकाना ।
 जीतै असंख्य शत्रु रहा, दर्प दिखाता,
 शय्या शरों की पा मरा, धर्म सिखाता ।

(नाथूराम शंकर)

रौद्रार्क जाति

तेईस मात्राओं के छन्द (भेद ४६३६८

उपमान

तेरह दस उपमान रच, दो गुरु दे अन्तै ।

उपमान छन्द में तेईस मात्राएँ होती हैं । तेरह और दस पर यति रहती
 है । अन्त में दो गुरु कर्ण-मधुर होते हैं । एक गुरु रहने से भी हानि नहीं ।
 जैसे—

कभी सुयश पाता नहीं, है अस्याचारी,
निरुद्यमी होता नहीं, सुख का अधिकारी ।
उसकी मंजिल का नहीं, अन्त कभी होता,
जो अन्धा है एक तो, तिस पर है सोता । (छन्दरत्नावली)

अवतारी

२४ मात्राओं के छन्द (भेद ७५०२५)

रोला

रोला की चौबीस कला यति ग्यारह, तेरह
रोला छन्द में चौबीस मात्राएँ होती हैं । ग्यारह और तेरह पर यति
रहती है । जैसे—

- (क) क्रम से बढ़ने लगी, युगल बीरों की लाली,
ताली देकर नाच, रहे थे रुद्र कपाली ।
व्रण-माला थी बनी, जपा फूलों की ढाली
रण-चण्डी पर चढ़ी, बड़ी काली मतवाली ।

अथवा

- (ख) माताओं के भाग, आज सोते से जागे
पहुँचे-पहुँचे राम, राजतोरण के आगे ।
न कुछ कहसकी न वे, देख ही सर्कीं सुतों को
रोकर लिपटीं उठा, उठा उन प्रणति-युतों को ।

अथवा

- (ग) समझी प्रभु ने कसक, भरत-जननी के मन की
‘मूल शक्ति माँ तुम्हीं, सुयश के इस उपवन की ।
फल; सिर पर ले धूल, दिये तुमने जो मीठे
उनके आगे हुए सुधा के घट भी सीठे ।

(मैथिलीशरण गुप्त)

१. पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता ।

अथवा

यद्यपि शठता युक्त, सबलता है उत्पासी,
पर निर्बलता सदा, सैकड़ों दुख है पाती ।
शत्रु किसी के लिए, नहीं है उत्तना घातक
जितना उसका आप, और निर्बलता पातक ।

(कामताप्रसाद गुरु)

दिवपाल

बार बारह-यति आये दिवपाल छन्द भावे ।

दिवपाल छन्द में बारह-बारह मात्राओं पर यति आती है, जैसे—

- (क) आते समीर-के-ये, सोंके मधुर कहाँ से ।
बहते निकुञ्ज में हैं, जो मन्द-मन्द गति से
किसका सन्देश जाकर, कहते प्रसून से हैं
क्यों फूल-फूल उठता, उड़ती सुगंध क्यों हैं

अथवा

- (ख) ऊपर सुदूर फैला, नीला असीम नभ है ।
नीचे अनन्त पृथ्वी, छुपया तले षष्ठी है ।
आधार किन्तु किसका, है मध्य में उभय के ।
अक्षांश और-रश्मि किस, संकेत में थमे हैं । (छन्दरत्नावली)

रूपमाला

रत्न किस-कल रूपमाला अन्त सोहे गाल ।

रूपमाला छन्द में चौबीस मात्राएँ होती-हैं । १४ और १० पर यति होती है । पाद के अन्त में गुरु और लघु होते हैं । जैसे—

चूमता था भूमितल को अर्द्धविष्ट सा भाल,
बिछ रहे थे प्रेम में के हा, जाल बनकर बाल ।
हृत्त-सा सिर पर उदा था, प्राणपति का हाथ,
हो रही थी प्रकृति अपने, आप पूर्ण सनाथ ।

(मैथिलीशरण गुप्त)

महावतारी जाति

पच्चीस मात्राओं के छन्द (भेद १२१३६३)

मुक्तामणि

तेरह बारह दो गुरु, मुक्तामणि रचि लीजे ।

मुक्तामणि छन्द में पच्चीस मात्राएँ होती हैं । अन्त में नियम से दो गुरु होने चाहिये । तेरह और बारह पर यति होती है । जैसे—

कुण्डल ललित कपोल पर,
सुखवि देत हैं ऐसे ।

घन में झपला दमकि अति,
लग नीकि दुति जैसे ।

चन्दन और विराज शुचि,
मनु लक्ष्मी अतिराजै ।

सब आभा तिहुँ लोक की,
मुख के आगे लाजै ।

(छन्दःशिक्षा)

महा भागवत जाति

छब्बीस मात्राओं के छन्द (भेद १६६४१८)

गीतिका

रत्न रवि कल धारिके, लग, अन्त रचिये गीतिका ।

गीतिका छन्द में छब्बीस मात्राएँ होती हैं। १४ और १२ पर यति होती है। पादान्त में लघु और गुरु होते हैं। कभी-कभी १२ और १४ पर भी यति आ पड़ती है। इस छन्द में तीसरी, दसवीं, सत्रहवीं और चौबीसवीं मात्राएँ लघु रहती हैं। अन्त में रगण कर्णमधुर होता है। जैसे—

(क) उस रुदन्ती विरहिणी के,

रुदन-रस के लेप से।

और पाकर ताप उसके,

प्रिय-विरह-विक्षेप से।

वर्ण वर्ण सदैव जिनके,

हो विभूषण कर्ण के।

क्यों न बनते कविजनों के,

ताम्रपत्र सुवर्ण के।

अथवा

(ख) धैर्य देकर धीर मुनि ने,

ज्ञान के प्रस्ताव से।

तेल में रखवा दिया,

नृप-शव सुरक्षित भाव से।

दूत भेजे दक्ष फिर,

सन्देश के अक्षर गिना।

जो बुला लावें भरत को,

प्रकृत-वृत्त कहे विना।

(मैथिलीशरण गुप्त)

अथवा

साधु-भक्तों में सुयोगी,

संयमी बढ़ने लगे।

सभ्यता की सीढ़ियों पै,

सूरमा चढ़ने लगे।

वेद-मन्त्रों को विवेकी,
 प्रेम से पढ़ने लगे ।
 वंचकों की छातियों में,
 शूल से गड़ने लगे ।

(नाथूराम शंकर)

नाक्षत्रिक जाति

सत्ताईस मात्राओं के छन्द (भेद ३१७८११)

सरसी

सोलह ^१ ग्यारह यति गल अन्ते, सरसी छन्द बखान ।

सरसी छन्द में सत्ताईस मात्राएँ होती हैं । यति सोलह-ग्यारह पर होती हैं । अन्त में गुरु-लघु होते हैं । जैसे—

काम-कोप-मद-लोभ-मोह-की,
 पँचरंगी कर दूर ।
 एक रंग तन मन वाणी में,
 भर ले तू भरपूर ।
 प्रेम पसार, न भूल भलाई,
 दैर विरोध विसार ।
 भक्तिभाव से भज शंकर को,
 भक्ति दया उर धार ।

(नाथूराम शंकर)

परम पिता हम हो जावें जब, दुराचरण के दास ।
 निर्दय बनकर हमें शान्ति दो, तज बात्सल्य विकास ।

१. पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता ।

निर्दय बनकर करो और भी, जी करना हो और,
निज विश्वास न छीनो हमसे, किन्तु किसी भी ठौर ।
(छन्दरत्नावली)

यौगिक जाति

अट्ठाईस मात्राओं के छन्द (भेद ५१४२२६)

हरिगीतिका

शृङ्गार भूषण अन्त जग जन, गाह्ये हरिगीतिका ।

हरिगीतिका छन्द में २८ मात्राएँ होती हैं । १६ और १२ पर यति रहती है । अन्त में लघु और गुरु रहते हैं । जहाँ-जहाँ चौकल आवें वहाँ जगण नहीं आना चाहिए । हरिगीतिका पद को चार बार कहने से भी यह छन्द बन जाता है, जैसे हरिगीतिका हरिगीतिका हरि, गीतिका हरिगीतिका । इसका मात्रा-क्रम यदि यों रहे और अन्त में रगण रहें तो लय ठीक बन जाती है ।

हरि । गीति । काहरि । गीति । काहरि । गीति । काहरि । गीतिका ।

२ + ३ + ४ + ३ + ४ + ३ + ४ + ५ = २८ ।
उदाहरण देखिए—

(क) हा ! पाँच 'ग्रामों' की बुरी यह, सन्धि जब होने लगी
सुनकर तथा उस बात को जब, मैं बहुत रोने लगी ।
क्या याद है ? था पांडवों के, सामने तूने कहा—
स्वीकृत नहीं यह सन्धि मुझको, माँ ! न तू आँसू बहा ॥
(मैथिलीशरण गुप्त)

(ख) वह रावरे पितु करी पत्नी, तजी विप्रन थूँ कि कै ।
अरु कहत हैं सब रावणादिक, रहे ताकहँ दूँ कि कै ।

१. पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता ।

यह लाज मरियत ताहिं तुमसों, भयो नातो नाथ जू
अब और मुख निरखै न ज्यों-स्थों, राखिए स्तुनाथ जू
(रामचन्द्रिका)

(ग) कवि काल कालानल कृपा कर, केतु करुणाकन्द है ।
सुखधाम सत्य सुपर्ण सच्छिव, सर्वप्रिय स्वच्छन्द है ।
भगवान भावुक-भक्त-वत्सल, भू विभू भुवनेश है ।
करतार तारक है तुही यह, वेद का उपदेश है ।
(नाथूराम शंकर)

सार

सौरह बारह अन्ते दो गुरु, सार छन्द अति नीको ।
सार छन्द में २८ मात्राएँ होती हैं । सोलह और बारह पर यति होती है । अन्त में दो गुरु हों तो लय ठीक बन जाती है । जैसे—

(क) चलो शहीदों की धरती को, आँसू से नहलाएँ ।
वीरों की सूनी समाधि पर, घी के दीप जलाएँ ।
जिसके लिए पाट दी हमने, थी लोथों से भाँसी ।
जिसके हित आजाद भगतसिंह, ने थी पाई फाँसी ।

अथवा

छुद्र जीव-समुदाय सभी यदि, पुत्रवान होने से
सहज ऊर्ध्वगति पा सकते हैं, विषय बीज बोलने से ।
तो फिर वृथा कर्म-साधन सब, आश्रम धर्म वृथा है ।
स्वर्ग-लाभ करने की क्या ही, सच्ची सहज प्रथा है ।

(वियोगी हरि)

१. पूर्वार्ध को गुरु नहीं बनाता ।

मेरे श्याम सलोने की है, मधु से मीठी बोली
कुटिल अलक वाले की आकृति, है क्या भोली-भोली ।
मृग से दृग हैं किन्तु अनी-सी, तीक्ष्ण दृष्टि अनमोली ।
बढ़ी कौन सी बात न उसने, सूक्ष्म बुद्धि पर तोली ॥
(मैथिलीशरण गुप्त)

विधाता

लहौ विद्या लहौ रत्नै, लखौ रचना विधाता की ।

विधाता छन्द में २८ मात्राएँ होती हैं । चौदह-चौदह पर यति होती है । प्रथम, आठवीं और पन्द्रहवीं मात्राएँ लघु होती हैं । जैसे—

- (क) बड़ों के मन्त्र मानेंगे, प्रसंगों को न भूलेंगे ।
कहो क्या ऊँच ऊँचों की, ऊँचाई को न छुलेंगे ।
सबों को शंकरानन्दी, अनिष्टों से उबारेंगे ।
बिगाड़ों को बिगाड़ेंगे, सुधारों को सुधारेंगे ।

अथवा

- (ख) जतीले जाति के सारे, प्रबन्धों को टटोलेंगे
जनों को सत्य सत्ता की, तुला से ठीक तोलेंगे ।
बनेंगे न्याय के नेगी, खलों की पोल खोलेंगे
करेंगे प्रेम की पूजा, रसीले बोल बोलेंगे ।

(नाथूराम शंकर)

महायौगिक जाति

उनतीस मात्राओं के छन्द (भेद ८३२०४०)

मरहटा

मरहटा अन्त गल, दस आठ तथा ग्यारह पर यति होत ।

मरहटा छन्द में उनतीस मात्राएँ होती हैं । दस, आठ और ग्यारह पर यति होती है । अन्त में गुरु और लघु रहते हैं । जैसे—

- (क) यह सुनि गुरु बानी, धनु-गुन तानी, जानी द्विजकुख दानि ।
ताड़का सँहारी, दारुण भारी, नारी अति बल जानि ।
मारोच बिडार्यो, जलधि उतार्यो मार्यो सबल सुबाहु ।
देवन गुण हख्यो, पुष्पन वख्यो, हख्यो अति सुरनाहु ।

अथवा

- (ख) यक दिन रघुनायक, सीय सहायक, रतिनायक अनुहारि ।
शुभ गोदावरि तट, विमल पञ्च वट, बैठे हुते मुरारि ।
छबि देखत ही तन, मदन मथो मन, शूर्पनखा तिहि काल ।
अति सुन्दर तन करि, कछु धीरज धरि, बोली वचन रसाल ।
(रामचन्द्रिका)

महातैथिक जाति

तीस मात्राओं के छन्द (भेद १३४६२६६)

चवपैया

दस अठ बारह पर, यति गुरु अन्ते, सोहत चवपैया में ।

चवपैया छन्द में तीस मात्राएँ होती हैं । दस, आठ और बारह पर यति होती है । अन्त में एक गुरु रहता है । जैसे—

सिर सेत विराजै, कीरति राजै, जनु केशव तपबल की ।
तनु बलित पलित जनु, सकल वासना, निकरि गई थल-थल की ।
काँपति शुभ ओवां, सब अँग सीवां, देखत चित्त भुलाहीं
जनु अपने मन 'प्रति, यह उपदेशति, या जग में कछु नाहीं ।

(रामचन्द्रिका)

अथवा

भै प्रगट कृपाला, दीनदयाला, कौसल्या हितकारी ।
हर्षित महतारी, मुनिमनहारी, अद्भुत रूप निहारी ।

१. पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता ।

लोचन अभिरासा, तन घनश्यामा निज आयुध भुजचारी
भूषण बनमाळा, नयन विशाळा, शोभा सिन्धु खरारी ।

(तुलसी)

अथवा

भृगुनन्दन सुनिये, मन महीं गुनिये, रघुनन्दन निरदोषी,
निजु ये अविकारी, सब सुखकारी, सब ही बिधि सन्तोषी ।
एकै तुम दोऊ और न कोऊ, एकै नाम कहाये ।
आयुर्बल खूंट्यो, धनुष जु टूट्यो, मैं तन मन सुख पाये ॥

(रामचन्द्रिका)

ताटङ्क

सोलह रत्न कला प्रतिपादहिं, है ताटकै मो अन्ते ।

ताटङ्क छन्द में तीस मात्राएँ होती हैं । सोलह और चौदह पर यति होती है । अन्त में मगण होता है । जैसे—

देव तुम्हारे कई उपासक, कई ढंग से आते हैं ।
सेवा में बहुमूल्य भेंट वे, कई रंग के लाते हैं ।
धूम-धाम से साज-बाज से, वे मन्दिर में आते हैं ।
मुक्तामणि बहुमूल्य वस्तुएँ, लाकर तुम्हें चढ़ाते हैं ।

(सुभद्राकुमारी चौहान)

अथवा

वन्दनीय वह देश जहाँ के, देशी निज अभिमानी हों ।
बाँधवता में बँधे परस्पर परता के अज्ञानी हों ।
निन्दनीय वह देश जहाँ के, देशी निज अज्ञानी हों,
सब 'प्रकार परतन्त्र पराई, प्रभुता के अभिमानी हों ।

(श्रीधर पाठक)

१. पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता ।

लावनी

लावनी छंद ताटक का ही एक भेद है। अन्तर यह है कि इसके अन्त में मगण होने का नियम नहीं है। मात्रा-संख्या तथा यति-नियम वही है। जैसे—

- (क) नहीं दान है नहीं दक्षिणा, खाली हाथ चली आई,
पूजा की भी विधि न जानती, फिर भी नाथ चली आई।
पूजा और पुजापा प्रभुवर, इसी पुजारिन को समझो।
दान-दक्षिणा और निछावर, इसी भिखारिन को समझो।

अथवा

- (ख) मैं उन्मत्त प्रेम की लोभी, हृदय दिखाने आई हूँ
जो कुछ भी है यही पास है, इसे चढ़ाने आई हूँ।
चरणों पर अर्पण है—इसको, चाहो तो स्वीकार करो
यह तो वस्तु तुम्हारी ही है, ठुकरा दो या प्यार करो।

(सुभद्राकुमारी चौहान)

अश्वावतारी जाति

इकतीस मात्राओं के छन्द (भेद २१७८३०६)

वीर

सोरह पन्द्रह की यति से गले, अन्त धरो तब सोहत वीर।
वीर छन्द में इकतीस मात्राएँ होती हैं। १६ और १५ पर यति होती है। अन्त में गुरु और लघु होते हैं। जैसे—

कौं प उठा आकाश अचानक, प्रान्त-प्रान्त कर उठा पुकार।
सुना सभी ने कहा सभी ने, सिर दे डाला दिया न सार।
उबल उठे उत्तम पंचनद, रहा लोभ का वार न पार।
हर-हर करके हहराये वे, सिर दे डाला दिया न सार ॥

(मैथिलीशरण गुप्त)

अथवा

पटक पादुका पहनो प्यारे, बूट इटाली का लुकदार ।
 डालो डबल वाच पाकट में, चमके चेन कंचनी चार ।
 रख दो गाँठ-गठीली लकुटी, छाता बेंत बगल में मार
 मुरली तोड़-मरोड़ बजाओ, बाँकी विगुल सुने संसार ।
 (नाथूराम शंकर)

अथवा

(केवल दो पाद)

बारह बरिस लै कूकर जिणँ, औ तेरह लै जिणँ सियार ।
 बरिस अठारह छत्री जीणँ, आगे जीवन के धिक्कार ॥
 (हिन्दी साहित्य के इतिहास में
 पं० रामचन्द्र शुक्ल द्वारा उद्धृत)

लाक्षणिक जाति

बत्तीस मात्राओं के छन्द (भेद २१७८३०६)

त्रिभंगी

दस अठ-अठ संगी, जन छह रंगी, छन्द त्रिभंगी गन्त भलो ।
 त्रिभंगी छन्द में बत्तीस मात्राएँ होती हैं । दस, आठ, आठ और छः
 पर यति होती है । अन्त में गुरु होता है । इसके किसी चौकल में जगण
 नहीं होता है । जैसे—

दशरथसंघाती, सकल बरातो, बनि-बनि मंडप, माँह गये ।
 आकाश विलासी, प्रभा प्रकासी, जलज गुच्छ जनु, नखत नये ।
 अति सुन्दर नारी, सब सुखकारी, मंगल गारी, देन लगीं ।
 बाजे बहु बाजत, जनु घन गाजत, जहाँ-तहाँ शुभ, शोभ जगीं ।
 (रामचन्द्रिका)

अथवा

परसत पद पावन, शोक नसावन, 'प्रगट भई तप, पुँज सही ।
देखत रघुनायक, जन सुखदायक, सम्मुख 'हूँ कर, जोरि रही !
अति 'प्रेम अधीरा, पुलक शरीरा, मुख नहिँ आवै, वचन कही ।
अतिशय बड़भागी, चरणन लागी, जुगल नयन जल, धार बही ।
(छन्दः प्रभाकर)

अथवा

करि वदन विमंडित, ओज अखंडित, पूरण पंडित, 'ज्ञान परं,
गिरिनन्दिनिनन्दन, असुर निकन्दन, सुर उर चन्दन, कीर्तिकरं ।
भूषण मृग लक्षणा, वीर विचक्षणा, जन 'प्रण रक्षणा, पाशधरं,
जय-जय गणनायक, खलगणघायक, दास सहायक, विघ्नहरं ।
(छन्दरत्नावली)

अथवा

जब जब धरि बीना, प्रकट प्रवीना, बहु गुन लीना, सुख सीता
पिय जियहि रिझावै, दुखनि भजावै, विविध बजावै, गुन सीता
तजि-मति संसारी, विपिन विहारी, सुख दुख कारी, धिरि आवै
तब तब जगभूषण, रिपुकुल दूषण, सबको भूषण, पहिरावै ।
(रामचन्द्रिका)

मात्रा दंडक प्रकरण

जिन मात्रिक सम छन्दों के प्रत्येक पाद में मात्रा संख्या ३२ मात्राओं से अधिक हो उन छन्दों को मात्रा-दंडक कहा जाता है। इन्हें दंडक क्यों कहा जाता है यह बात हम वर्ण-दंडकों के प्रकरण में लिख आए हैं। यह छन्द अधिक प्रचलित नहीं है। इसलिए हम केवल छात्रों की सामान्य

१. पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता ।

जानकारी के लिए ही दो तीन छन्दों के लक्षण और उदाहरण इस प्रकार में लिखेंगे।

३७ मात्राओं का करखा दंडक

करखा दंडक में ३७ मात्राएँ होती हैं। आठ, बारह, आठ और नौ पर यति होती है। पाद के अन्त में यगण रहता है। जैसे—

तमो नरसिंह, बलवन्त नरसिंह 'प्रभु, सन्त हित काज अवतार धारो।
खम्भ ते निकसि, भू हिरणकश्यप पटक, झटक दै नखन, झट उर
विदारो।

ब्रह्म रुद्रादि, सिर नाथ जय जय ज कहत, भक्त 'प्रह्लाद, निज गोद
लीनो।

प्रीति सों प्राटि, दै राज सुख साज सब, नरायनदास, बर अभय दीनो।
(छन्दःप्रभाकर)

४० मात्राओं का विजया दंडक

विजया दंडक में चालीस मात्राएँ होती हैं। दस, दस, दस और दस पर यति रहती है। इसके अन्त में यदि रगण हो तो लय मधुर हो जाती है। जैसे—

प्रथम दंकोर मुकि, झारि संसार मद, चण्ड कोदण्ड रह, मण्ड नव-
खण्ड को।

बालि अचला अचल, बालि दिगपाल बल, पालि अधिराज के, वचन
परचण्ड को।

कोधु प्रै ईश को, कोधु जगदीश को, कोधु उपजाय भृगु, नन्द बरि-
बण्ड को।

अग्नि बर स्वर्ग को, अग्नि अपवर्ग धनु, भंग को शब्द गयो, भेद
ब्रह्मण्ड को।

(रासचन्द्रिका)

१. पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता।

४६ मात्राओं का हरिप्रिया दंडक

हरिप्रिया दंडक में छयासीस मात्राएँ होती हैं। बारह, बारह, बारह और दस पर यति रहती है। पाद के अन्त में गुरु होता है। जैसे—
 सोहने कृपानिधान, देव देव रामचन्द्र, भूमि पुत्रिका समेत, देव चित्त
 मोहैं।
 मानो सुरतरु समेत, कल्पवेलि छज्जि निकेत, शोभा शृंगार किधौ, रूप
 धरे सोहैं।
 लक्ष्मीपति लक्ष्मीयुत, देवीयुत ईश किधौ, ज्ञायायुत परम ईश, चारु
 वेश राखैं।
 बन्दौ जगमात तात, चरण युगल नीरजात, जाको सुर सिद्धविध, मुनि-
 जन अभिलाखैं।
 (छन्दःप्रभाकर)

अर्धसम मात्रिक छन्द प्रकरण

अर्धसम मात्रिक उन छन्दों को कहा जाता है जिनके प्रथम और तृतीय तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण परस्पर मिलते हों। छन्दःशास्त्र में प्रथम और तृतीय पादों को विषम पाद तथा द्वितीय और चतुर्थ पादों को समपाद कहते हैं। इस प्रकरण में मुख्य-मुख्य अर्धसम मात्रिक छन्दों का वर्णन किया जायगा।

बरवै

विषमनि बारह बरवै, सम कल सात।

बरवै छन्द के विषम चरणों में बारह-बारह मात्राएँ होती हैं और सम चरणों में सात सात। अन्त में यदि जगण रक्खा जाय तो बहुत प्रिय लगता है। जैसे—

अवधि-शिक्षा का डर पर, था गुरु भार

मिल-मिल काट रही थी, दग-जल-धार।

(मैथिलीशरण गुप्त)

या

सबसे मिलकर रह मन, बैर विसार ।

दुर्लभ नर तन पाकर, कर उपकार ॥ (अलंकार प्रवेशिका)

या

- (क) अब जीवन कै है कपि, आस न कोइ ।
कनगुरिया कै मुन्दरी, कंकन होइ ।

या

- (ख) नाम भरोस नाम बल, नाम सनेहु
जनम-जनम रघुनन्दन, तुलसिहिं देहु ।

या

- (ग) केहि गनति महुँ गनती, जस बन घास ।
राम जपत भये तुलसि, तुलसीदास ।

या

- (घ) गरब करहु रघुनन्दन, जनि मन माँह ।
देखहु आपनि मूरति, सिय कै छाँह । (तुलसी)

अथवा

- (क) कासों कहौ सन्देश, पिय परदेसु !
लगहु चहत नहिं फूले, तिहि बन टेसु ।

अथवा

- (ख) टूटि खाट घर टपकत, टटिओ टूटि ।
पिय कै बाँह उसिसवाँ, सुख कै लूटि । (रहीम)

अतिबरवै

विषमनि बारह सम नौ अति बरवै छन्द ।

अतिबरवै छन्द के विषम पादों में बारह-बारह मात्राएँ तथा सम पादों में नौ-नौ मात्राएँ होती हैं । अन्त में जगण कर्णमधुर होता है । जैसे—

पीतम इक सुमिरिनियाँ, मोहिं देइ जाहु,
जिहि जपि तोर बिरहवा, चुप करब निबाहु । (रहीम)

अथवा

कवि समाज को बिरवा, भल चले लगाय
सींचन की सुधि लीजो, कहूँ मुरझि न जाय ।

(छन्दःप्रभाकर)

जान आदि कवि तुलसी, नाम परभाऊ ।

उलटा जपत काल तें, भये अषिराऊ ।

(बरवै रामायण से किञ्चित्
परिवर्तित)

दोहा

जा न विषम तेरा कला, सम शिव दोहा मूल ।

दोहे के विषम अर्थात् पहले और तीसरे चरणों में तेरह मात्राएँ होती हैं और सम अर्थात् दूसरे और चौथे चरणों में ग्यारह मात्राएँ होती हैं । विषम चरणों के आदि में जगण नहीं होना चाहिए, तथा उनके अन्त में सगण, रगण या नगण आना चाहिए । सम चरणों के अन्त में जगण या तगण आना चाहिए । दोहे की रचना के लिए निम्नलिखित पंक्ति को याद कर लेना चाहिए ।

जा न विषम राखै सरन, अन्त सु सम हो जात ।

दोहे का मात्राक्रम यों है—

विषम चरण

$$३ + ३ + २ + ३ + २ = १३$$

अथवा

$$४ + ४ + ३ + २ = १३$$

सम चरण

$$३ + ३ + २ + ३ = ११$$

अथवा

$$४ + ४ + ३ = ११$$

उदाहरण—

(क) जिसके सेवन से बने, पामर नर सिरमौर ।

राम रसायन से सरस, है न रसायन और ॥

अथवा

(ख) पति का सारा कथन सुन कह बातें कथनीय ।

रामचन्द्र मुखचन्द्र की, बनी चकोरी सीय ॥

(वैदेही वनवास)

अथवा

(क) बता अरी, अब क्या करूँ, रूपी रात से रार ।

भय खाऊँ, आँसू पियूँ, मन मारूँ झखमार ॥

अथवा

(ख) अरी, सुरभि जा, लौट जा, अपने अंग सहेज ।

तू है फूलों में पली, यह काँटों की सेज ॥

अथवा

(ग) हाय ! न आया स्वप्न भी, और गई यह रात ।

सखि, उडुगण भी उड़ चले, अब क्या' गिनुँ प्रभात ॥

अथवा

(घ) आओ हो, आओ, तुम्हीं, प्रिय के स्वप्न विराट ।

अर्घ्य लिये आँखें खड़ीं, हेर रही हैं बाट ॥

अथवा

(ङ) तप में तू भी कम नहीं, जी, जुगुनू बड़ भाग,

भवन-भवन में दीप है, जा, वन-वन में जाग । (साकेत)

या

केहरि को अभिषेक कब, कीन्हों विप्र समाज ।

निज भुज बल के तेज तें, विपिन भयो मृगराज ॥ (दीनदयालगिरि)

६. पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता ।

(क) तुलसी मीठे बचनतें सुख उपजत चहुँ ओर ।
बसीकरन यह मन्त्र है, परिहर बचन कठोर ॥

(ख) काम क्रोध मद लोभ की, जौ लों मन में खान ।
तौ लों पण्डित मूरखौं, तुलसी एक समान ॥

(तुलसी)

सोरठा

सम तेरा विषमेश, दोहा उलटे सोरठा ।

सोरठे के विषम चरणों में ग्यारह-ग्यारह मात्राएँ और सम चरणों में तेरह-तेरह मात्राएँ होती हैं। यह दोहे का उलटा छन्द है। सोरठे के सम चरणों में जगण नहीं आना चाहिए। इस छन्द में प्रथम और तृतीय पाद की तुक आपस में मिलती है। कहीं-कहीं प्रथम और तृतीय पाद की तुक मिलने के साथ-ही-साथ द्वितीय और चतुर्थ पाद की तुक भी मिल जाती है।
जैसे—

(क) लिखकर लोहित लेख, डूब गया है दिन अहा !
व्योम-सिन्धु सखि, देख, तारक बुद्बुद दे रहा !

अथवा

(ख) हाय ! हृदय को थाम, पढ़ भी मैं सकती कहाँ,
दुःस्वप्नों का नाम, लेती है सखि, तू वहाँ ।

(साकेत)

अथवा

फूले फलइ न बेंत, यदपि सुधा-बरसहि जलद ।
मूरख हृदय न चेत, जो गुरु मिलहि विरञ्चि सम ॥

(छन्दरत्नावली)

उल्लाल

विषमनि पन्द्रह धरिये कला, सम तेरा उल्लाल कर ।
उल्लाल के विषम चरणों में पन्द्रह-पन्द्रह मात्राएँ होती हैं और सम

चरणों में तेरह-तेरह । जैसे—

- (क) हे शरणदायिनी देवि ! तू करती सबका आण है ।
हे मातृभूमि ! सन्तान हम, तू जननी तू प्राण है ॥

अथवा

- (ख) उस मातृभूमि की धूल में, जब पूरे सन जायँगे ।
होकर भव-बन्धन-मुक्त हम, आत्मरूप बन जायँगे ॥

अथवा

- (ग) नव द्रव्यों के अति योग से, उपजा सब संसार है ।
हस अस्थिर के अस्तित्व का, शंकर तू करतार है ॥

(छन्दरत्नावली)

रुचिरा (द्वितीय^१)

विषम चरण कल धारहु सोला, रुचिराविय सम मनु कर्णा ।

इस छन्द में विषम पादों की सोलह-सोलह मात्राएँ होती हैं और सम पादों की चौदह-चौदह । इसके पादान्त में दो गुरु होते हैं । इस तरह यह 'रुचिराविय' अर्थात् 'रुचिरा द्वितीय' छन्द होता है । जैसे—

- (क) मर जाने पर कण देहों के, इसमें ही मिल जाते हैं ।
हिन्दु जलते यवन ईसाई, स्थान इसी में पाते हैं ॥

अथवा

- (ख) ऐसी मातृभूमि है मेरी, स्वर्ग लोक से भी प्यारी ।
जिसके पद कमलों पर मेरा, तन मन धन सब बलिहारी ॥

(मन्नन द्विवेदी)

सूचना:—जो छन्द दो पंक्तियों में लिखे जाते हैं, जैसा कि इस प्रकरण में किया गया है, उनकी प्रत्येक पंक्ति को दल कहा जाता है ।

१. रुचिरा नामक एक सम मात्रिक छन्द भी है जो इस पुस्तक में नहीं दिया गया है ।

मात्रिक विषम छन्द प्रकरण

जो मात्रिक छन्द न सम हों और न अर्धसम हों उन्हें विषम छन्द कहा जाता है। जिन छन्दों में चार से कम या अधिक चरण रहते हैं उन्हें भी विषम छन्द ही कहा जाता है। इस प्रकरण में हम कुछ प्रसिद्ध मात्रिक विषम छन्दों के लक्षण और उदाहरण देते हैं।

कुंडलिया

कुंडलिया दो छन्दों के मेल से बनता है। दोहे के दो दल ऊपर तथा रोला छन्द के चार पाद नीचे रख देने से कुंडलिया छन्द बन जाता है। दोहे के एक दल में २४ मात्राएँ होती हैं और रोला के एक चरण में भी २४ मात्राएँ होती हैं। इस प्रकार २४-२४ मात्राओं वाला छः चरणों का यह छन्द बन जाता है। विशेष बात इसमें यह है कि इस छन्द के अन्त में वही शब्द आता है जो इसके आदि में रक्खा गया हो तथा इस छन्द में प्रयुक्त दोहे का चौथा चरण रोला के प्रथम चरण के आदि में अवश्य रखा जाता है। यह छन्द कभी बहुत लोकप्रिय रहा है। गिरिधर की कुंडलियाँ आज तक भी लोगों की जिह्वा पर हैं।

उदाहरण—

रहिये लटपट काट दिन, वरु घामें माँ सोय ।

छाँह न वाकी बैठिए, जो तरु पतरो होय ॥

जो तरु पतरो होय, एक दिन धोखा दै है ।

जा दिन बहे बयार, टूटि तब जर से जैहे ॥

कह गिरधर कविराय, छाँह मोटे की गहिये ।

पत्ता सब झरि जाय, तऊ छाया में रहिये ॥

(गिरधरकविराय)

अथवा

नाहीं भूजि गुलाब, तू गुनि मधुकर गुँजार ।

यह बहार दिन चार, है बहुरि कटीली डार ॥

यह बहार दिन चार, होहिगी ग्रीष्म आये ।
 लुवै चलेगी संग, अंग सब जैहैं ताये ॥
 बरनै दीनदयाल, फूल जौं लौं तो पाहीं ।
 रहे घेरि चहुँ फेरि, फेरि अलि ऐहैं नाहीं ॥

(दीनदयाल गिरि)

या

बगला बैठा ध्यान में, प्रातः जल के तीर ।
 मानो तपसी तप करे, मलकर भस्म शरीर ॥
 मल कर भस्म शरीर, तीर जब देखी मछली ।
 कहै 'मीर' 'प्रसि चोंच, समूची फौरन निगली ॥
 फिर भी आवें शरण, वैर जो तज के अगला ।
 उनके भी तू प्राण, हरे, रे छी ! छी ! बगला ॥

(अमीर अली मीर)

छप्पय

यह छन्द रोला और उल्लाला छन्द के संयोग से बनता है । प्रारम्भ में रोला छन्द के चार पाद रखे जाते हैं और उसके अन्त में उल्लाला छन्द के दो दल रख दिये जाते हैं । इस तरह से यह छः पदों का छप्पय छन्द बन जाता है । उल्लाला छन्द एक तो मात्रिक सम छन्द है जिसमें प्रत्येक चरण में १३-१३ मात्राएँ होती हैं, दूसरा एक मात्रिक अर्धसम है जिसके विषम चरणों में १५ तथा सम चरणों में १३ मात्राएँ होती हैं ।^२ छप्पय में इन दोनों छन्दों का प्रयोग किया जाता है । इसलिए छप्पय के अन्तिम दो चरण कहीं २६-२६ मात्राओं के होते हैं और कहीं-कहीं २८ मात्राओं के । स्मरण रहे कि उल्लाला के दो चरण मिलकर छप्पय का एक पाद बनेगा । क्रमशः उदाहरण देखिए—

१. पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता ।

२. इसका ठीक नाम उल्लास है ।

काटा हमने और, खूब पीटा मल-मलकर ।
 पेल-पेल कर तेल, निकाला तुझ से जी भर ॥
 फिर दीपक में डाल, तनिक-सा तूल मिलाया ।
 निर्दयता से खोद, खोदकर तुम्हें जलाया ॥
 हमने तो अस्तित्व तक, नष्ट तुम्हारा कर दिया ।
 तुमने अज्ञा प्रकाश से, अखिल भुवन को भर दिया ॥^२

(छन्दरत्नावली, किञ्चित्परिवर्तित)

दूसरा उदाहरण (अर्धसम मात्रिक उल्लाल)

जिसकी रज में लोट, लोटकर बड़े हुए हैं ।
 घुटनों के बल सरक, सरककर खड़े हुए हैं ॥
 परमहंस-सम बाल्य, काल में सब सुख पाये ।
 जिसके कारण धूल, भरे हीरे कहलाये ॥
 हम खेले कूदे हर्षयुत, जिसकी प्यारी गोद में ।
 हे मातृभूमि, तुझको निरख, मग्न क्यों^३ न हों मोद में ॥
 (मैथिलीशरण गुप्त)

मिलिन्दपाद

विषम-वृत्त प्रकरण में हम छन्दों के मिलिन्दपाद नामक एक भेद का उल्लेख कर आये हैं । वर्णवृत्तों की तरह किसी मात्रिक समछन्द के चौथे चरण के अनन्तर भी उसी मात्रिक छन्द के दो चरण और जोड़कर मिलिन्द-पाद छन्द बना दिया जाता है । इसके छः पाद होने के कारण हमने इस छन्द को मात्रिक विषम प्रकरण में रख दिया है । जिन मात्रिक समछन्दों या वर्णसम वृत्तों के छः-छः चरण बना दिये जाते हैं उन छन्दों को ही मिलिन्द-पाद कहा जाता है । कुण्डलिया और छप्पय जैसे छः-छः पादों के विषम-छन्दों से इनकी यही भिन्नता है । संस्कृत के छन्दः शास्त्र में इन दोनों प्रकार के छन्दों के लिये गाथा नाम रखा हुआ है ।^४

१. पूर्वार्द्ध को गुरु नहीं बनाता । २. सरसों से कहा गया है ।

३. शेषं गाथास्त्रिभिः षड्भिश्चरणैश्चोपलक्षिताः (वृत्तरत्नाकर)

हिन्दी में कविवर नाथूराम शर्मा शंकर ने ऐसे बहुत से छन्दों की रचना की है। उदाहरण लीजिए—

शृङ्गार मिलिन्दपाद

पाप का क्षणिक प्रभाव विलोक,
लोभ यदि सके न कोई रोक।
शोक तो उसकी मति पर शोक
बना क्या, शिगड़ा जब परलोक।
विजय है वही कि सब संसार
करे पीछे भी जय जयकार ॥ (छन्दःशिक्षा)

इस छन्द के छहों चरणों की रचना शृङ्गार छन्द में की गई है अतः यह शृङ्गार-मिलिन्दपाद है।

मात्रिक अर्धसम और मात्रिक विषमछन्दों के अन्तर्गत आर्या प्रकरण

आर्या आदि छन्द संस्कृत भाषा में बहुत प्रचलित हैं। अब हिन्दी के कवि भी इनका प्रयोग करने लगे हैं। इस प्रकरण में इन छन्दों के लक्षण और उदाहरण दिये जाएँगे। इनमें से कुछ छन्द विषमछन्द हैं और कुछ अर्धसम हैं।

आर्या

आर्या छन्द के पहले और तीसरे पादों में बारह-बारह, दूसरे पाद में अठारह और चौथे पाद में पन्द्रह मात्राएँ होती हैं।

विशेष :

आर्या की रचना करते समय इस बात पर ध्यान दिया जाता है कि आर्या के पूर्वदल में सात मात्रिक गण तथा अन्त में एक गुरु रखा जाता है। मात्रिक गण चार मात्राओं का होता है, जैसे ऽ ऽ, । । ऽ, ऽ । ।, । । । ।, । ऽ । । इस पूर्वदल में विषम स्थान में अर्थात् पहले, तीसरे, पाँचवें और सातवें स्थान में जगण नहीं आना चाहिए तथा छठे स्थान में या जगण होना चाहिए या चारों लघु मात्राओं का एक गण होना चाहिए।

यह हुआ आर्या के प्रथम दल के सम्बन्ध में। आर्या के दूसरे दल में और सब बातें पहले दल के ही समान होती हैं, अन्तर इतना है कि उसके छठे गण में केवल एक लघु ही रहता है। इसीलिये आर्या के चौथे चरण में १५ मात्राएँ रह जाती हैं।

इस छन्द के विषम अर्थात् पहले और तीसरे पाद आपस में मिलते हैं पर समपाद नहीं मिलते इसलिए यह विषम छंद है।

उदाहरण—

१	२	३	४	५	६	७
॥ ५	॥ ५	॥ ५	॥ ५	॥ ५	॥ ५	॥ ५
(क) तरसूँ	मुझसी	में ही,	सरसे -	हरसे -	हँसे	प्रकृति प्यारी।
१	२	३	४	५	६	७
॥ ५	॥ ५	॥ ५	॥ ५	॥ ५	॥ ५	॥ ५
सबको	सुख	होगा तो,	मेरी	भी	आयगी	वारी ॥

अथवा

(ख) हंस, हहा ! तेरा भी, बिगड़ गया क्या विवेक बन-बन के ?
मोती नहीं, अरे, ये, आँसूँ हैं ऊमिल्ला जन के।

अथवा

(ग) पहले आँखों में थे, मानस में कूद मग्न ^१प्रिय अब थे।
छींटे वही उड़े थे, बड़े-बड़े अश्रु वे कब थे ?

अथवा

(घ) औरों की क्या कहिए, निज रुचि ही एकता नहीं रखती।

चन्द्रामृत पीकर तू, चकोरि, अङ्गार है चखती।

(मैथिलीशरण गुप्त)

गीति

आर्या छन्द के पूर्वदल की तरह जहाँ दोनों दलों की रचना की जाती है वहाँ गीति छन्द होता है, अर्थात् गीति छन्द के दोनों दलों में ७ गणों के अनन्तर एक गुरु रक्खा जाता है और विषम स्थानों में जगण का प्रयोग नहीं होता तथा छठे स्थान पर जगण रक्खा जाता है।

इस छंद के विषम पाद पहले और तीसरे, जिनमें १२-१२ मात्राएँ होती हैं तथा सम पाद दूसरे और चौथे, जिनमें १८-१८ मात्राएँ होती हैं,

१. पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता।

परस्पर मिलते हैं, इसलिए यह छंद अर्धसम मात्रिक छन्द के अन्तर्गत माना जाता है ।

उदाहरण—

(क) चंचल भी किरणों का चरित्र 'क्या ही पवित्र है भोला ।

देकर साख उन्होंने उठा लिया लाल-लाल वह गोला ॥

अथवा

(ख) सखि आशांकुर मेरे, इस मिट्टी में पनप नहीं पाये ।

फल-कामना नहीं थी, चढ़ा सकी फूल भी न मनभाये ॥

अथवा

(ग) साल रही सखि ! माँ की, माँकी वह चित्रकूट की मुस्करी ।

बोली जब वे मुझसे,—‘मिला न बन ही न भवन ही तुझको ॥’

अथवा

(साकेत)

(क) नाथ, कहाँ जाते हो ? अब भी यह अन्धकार छाया है ।

हा ! जग कर 'क्या पाया, मैंने वह स्वप्न भी गँवाया है ॥

अथवा

(ख) सखि, वे कहाँ गये हैं ? मेरा बायाँ नयन फड़कता है ।

पर मैं कैसे मानूँ ? देख, यहाँ यह हृदय धड़कता है ।

(यशोधरा)

जिस प्रकार गीति छंद स्वतंत्र छंद न होकर आर्या का ही एक भेद है वैसे ही उपगीति, उद्गीती, और आर्यागीति छंद भी स्वतंत्र छंद न होकर आर्या के ही भेदमात्र हैं । अर्थात् जिस छंद में आर्या के दूसरे दल का लक्षण घटता हो उसे उपगीति कहा जाता है, जिसमें आर्या के दोनों दल परस्पर बदल दिये जाएँ अर्थात् आर्या का पूर्वदल उत्तरदल बन जाए और आर्या का उत्तरदल पूर्वदल बन जाए उसे उद्गीति छंद कह दिया जाता है और जिसमें आर्या का एक दल बनाकर उसमें एक गुरु और जोड़ दिया जावे अर्थात् समपादों में एक गुरु और जोड़ कर २०-२० मात्राएँ कर दी जावें उसे आर्या-गीति कहा जाता है । विशेष विलक्षणता न होने के कारण हमने इन छन्दों के उदाहरण यहाँ नहीं दिये ।

१. पूर्वचर को गुरु नहीं बनाता ।

चौथा अध्याय

उभय छंद तथा मुक्त छंद प्रकरण

कुछ कवियों ने नये छंदों का भी आविष्कार किया है। इनमें से एक तो उभय छंद के नाम से कहा जाता है दूसरा मुक्त या स्वच्छंद छंद के नाम से। मुक्त या स्वच्छंद छंद तो हिन्दी में आजकल पर्याप्तरूप से चल निकला है, पर उभय छंद अभी उतना प्रचलित नहीं हुआ। कारण कदाचित् यह रहा हो कि उसमें अक्षरों के चुनाव की कोरी खिलवाड़ के अतिरिक्त और कोई विशेष बात नहीं। छंद तो आजकल पहले ही कविता के लिये बाधक समझे जाते हैं और उन छंदों को और भी क्लिष्ट बनाते जाना कम लोगों को ही पसंद आता होगा। कविवर नाथूराम शर्मा शंकर ने इस छंद में रचनाएँ की हैं।

उभय छंद

जिन मात्रिक छंदों में उनका अपना लक्षण घटने के साथ-ही-साथ वर्णों की संख्या तथा यति भी ठीक-ठीक घट जाये उसे उभय छंद कहा जाता है। जैसे—

अपनी सन्तति काक, कृपण से पलवाती है।

पेड़-पेड़ पर बैठ, मुदित मंगल गाती है।

कोयल की करतूत, दक्ष अबला गहती है।

तनुज धाय को सौंप, आप युवती रहती है।

(नाथूराम शर्मा शंकर)

इस पद्य के प्रत्येक चरण में ११-१३ मात्राओं की यति से २४-२४ मात्राओं का रोला छंद है। कवि ने इस पद्य में रोला छंद के निभाने के साथ-ही-साथ ८ और ६ की यति से प्रत्येक पाद में १७-१७ वर्ण रखने के नियम को भी निभाया है, जो कि पर्याप्त परिश्रम से साध्य है।

यहाँ इतना स्मरण रखना चाहिए कि इस छन्द में वर्णों की संख्या और यति के नियम का ही पालन किया जाता है, वर्ण-क्रम का निर्वाह नहीं किया जाता। इसलिए उभय छन्द का यह लक्षण समझना कि इसमें मात्रिक छन्द और वर्णवृत्त दोनों के लक्षणों का समन्वय हो जाता है, भ्रामक होगा। ऊपर के उदाहरण में जिस तरह मात्रिक छन्द का लक्षण पूरा-पूरा घट जाता है वैसे किसी वर्णवृत्त का नहीं घटता। रोला छन्द की तरह हम उसमें किसी वर्णवृत्त का नाम नहीं बता सकते, क्योंकि उसमें कोई वर्णक्रम नहीं है। पहले पाद के आदि में यदि सगण है तो दूसरे पाद के आदि में रगण है, तीसरे पाद के आदि में भगण है और चौथे पाद के आदि में नगण है। वर्णवृत्तों में ऐसा नहीं होता।^१

दूसरा उदाहरण

ऊपर को जल सूख, सूख कर उड़ जाता है।

सरदी से सकुचाय, जलद-पदवी पाता है।

१ ऊपर के विवेचन से यह स्पष्ट हो गया होगा कि वस्तुतः इस छन्द को उभय छन्द कहना पाठकों के मन में भ्रान्त धारणा पैदा करना है। प्रचलित हो जाने के कारण हमने यह नाम इस पुस्तक में दे तो दिया है वैसे यह नाम जँचता नहीं। इस छन्द के विषय में यह कहना भी ठीक नहीं कि जिस प्रकार दो अलंकारों के एकत्र होने पर उभयालंकार होता है उसी प्रकार वर्णवृत्त और मात्रिक दोनों की विशेषताएँ जब एक ही पद्य में विद्यमान हों तब उसे उभय छन्द कहा जाता है। संसृष्टि आदि उभयालंकारों में हम दो भिन्न-भिन्न अलंकारों का नाम जिस तरह स्पष्ट-स्पष्ट ले सकते हैं उस तरह इस छन्द में नहीं। इसमें हम मात्रिक छन्द का नाम तो ले सकते हैं, पर वर्णिक वृत्त का नाम नहीं ले सकते। अतः इस उभय छन्द को उभयालंकार के समान नहीं समझना चाहिए।

पिघलावे रवि-ताप धरातल पै गिरता है ।

बार-बार इस भाँति, सदा हिरता-फिरता है ॥

(काव्य-प्रदीप)

यह रोला छन्द है । इसके प्रत्येक चरण में ८ और ६ की यति से वर्णों की संख्या भी समान है, अर्थात् १७-१७ हैं ।

मुक्त या स्वच्छन्द छन्द

जिस प्रकार कुछ लोगों ने उभय छन्द आदि का आविष्कार करके छन्दों को अधिक क्लिष्ट बना दिया है उसी तरह कुछ लोगों के मन में ऐसी प्रतिक्रिया पैदा हुई कि उन्होंने कविता के लिए मात्रा, यति, वर्णक्रम आदि किसी का भी बंधन रखना अच्छा नहीं समझा । उन्होंने ऐसे ढंग में रचनाएँ कीं जिनमें पुराने नियम सब छोड़ दिये गये । क्योंकि उन्होंने अपने विचार से कविता को नियमों से मुक्त किया—पुराने बंधनों से स्वच्छन्द कर दिया—अतः ऐसी रचनाओं को वे मुक्त या स्वच्छन्द छन्द में रची हुई कहने लगे । जिस वस्तु में कोई नियम नहीं उसका कोई लक्षण भी नहीं हो सकता । अतः मुक्त या स्वच्छन्द छन्द का कोई लक्षण नहीं । हाँ, इतना कहा जा सकता है कि कवि इसमें लय का ध्यान रखता है । लय फिर ऐसी चीज है कि वह अनुभव पर आश्रित होने के कारण किसी नियम के बंधन में नहीं लाई जा सकती । जैसे—

(क) भर देते हो

बार-बार प्रिय, करुणा की किरणों से

सुब्ध हृदय को पुलकित कर देते हो ।

मेरे अन्तर में आते हो देव निरन्तर,

कर जाते हो व्यथा-भार लघु

बार-बार कर-कज बढ़ाकर;

अन्धकार में मेरा रोदन

सिक्त धरा के अञ्जल को

करता है क्षण-क्षण—

कुसुम-कपोलों पर वे लोल शिशिर-कण;
तुम किरणों से अश्रु पोंछ लेते हो;
नव-प्रभात जीवन में भर देते हो ।

(ख) माँ, मुझे वहाँ तू ले चल ?

देखूँगा वह द्वार—

दिवस का पार—

मूर्छित हुआ पड़ा है जहाँ

वेदना का संसार !

करती है तटिनी तरणी से छलबल—

मुझे वहाँ तू ले चल !

उतर रही है लिए हाथ में प्यारा तारा-दीप

उस अरण्य में बढ़ा रही है पैर, सभीत,

बता, कौन वह ?

किसका है वह अन्धकार का अञ्जल—

मुझे वहाँ तू ले चल !

(परिमल)

इन उदाहरणों में मात्राओं की संख्या का कोई नियम नहीं है । कवि का भाव-प्रवाह जैसे चलता गया वैसे ही वह लय का ध्यान रख कर रचना करता गया । प्रत्येक पंक्ति में मात्राएँ समान हों यह बात नहीं निभाई गई । अतः ये रचनाएँ मुक्तक या स्वच्छन्द छन्द में रची गई हैं ।^१

१ छन्दों की कुछ पुस्तकों में मुक्त या स्वच्छन्द छन्द के दो विभाग कर दिये गये हैं । पहले विभाग में वह वर्ग रक्खा गया है जिसमें ऐसे मुक्त छन्द आते हैं जिनमें मात्राओं तथा यति आदि का नियम तो परम्परा प्राप्त रूप से निभाया जाता है परन्तु जिनके चरण चार होने के स्थान पर पाँच-छः या इससे अधिक होते हैं । उदाहरण के तौर पर निम्नलिखित कवित्त देखिए जिसमें १६ १५ वर्णों की यति से

प्रत्येक चरण में ३१ वर्ण तो हैं, पर जिसमें चरण चार के स्थान पर पाँच हैं:—

हाल हिन्दुवान को बेहाल बनि जातो बस
माल मूसि-मूसि मुसलिम जन खावतो ।
लूटि जाति लाज अरु दूटि जाती टाँग, माँग
भारत की भूमि भाल और को भरावतो ।
फूटि जातो करम-धरम धन छूटि जातो
मरम न परम पुनीत बतरावतो ।
लागतो न बानक बहादुरी को वीरन की
देस भर भरम भयानक भौ छावतो—
सिक्खन जगातो दुरभिकखन भगातो कौन
जौ न गुरु नानक अचानक मों आवतो ।

(काव्य-प्रदीप)

हमारे विचार में यह विभाग ठीक नहीं है । पिछला कवित्त मुक्त या स्वच्छन्द छन्द की रचना के उदाहरण में नहीं दिया जा सकता, क्योंकि जब वहाँ वर्ण-संख्या और यति के नियम को निभाया गया है तो वह रचना नियम-बद्ध हो गई स्वच्छन्द कैसे रही ? केवल चरणों के ही घट बढ़ जाने से कोई रचना मुक्त या स्वच्छन्द नहीं हो जाती । जैसे हमने पहले कहा है, संस्कृत के छन्दःशास्त्र में ऐसी रचनाओं के लिए जिनमें चार से न्यून या अधिक चरण हों, गाथा शब्द का प्रयोग किया जाता है ।

पाँचवाँ अध्याय

दग्धाक्षर, शुभाशुभगण तथा तुक प्रकरण

छंदः शास्त्रियों में ऐसी प्रथा चली आई है कि जो अक्षर परम्परा से अशुभ माने जाते हैं उनको वे छन्द के आदि में रखना उचित नहीं समझते। आजकल के बुद्धिवादी युग में ऐसे श्रद्धालु कवि कम हैं जो इस प्राचीन प्रथा का पालन करते हैं। छात्रों के परिचय के लिये हम यहाँ संक्षेप से इस विषय पर कुछ लिखते हैं।

दग्धाक्षर

छन्दः शास्त्रियों ने निम्नलिखित अक्षरों को अशुभ कहा है :

ङ, झ, ज, ट, ठ, ड, ण, त, थ, प, फ, ब, भ, म, र, ल, व, ष और ह = १६। इन्हें छन्द के आदि में कभी प्रयुक्त न करना चाहिए। इन १६ अशुभ अक्षरों में से झ, भ र, प, और ह ये पाँच अक्षर तो बहुत ही अशुभ माने जाते हैं। इन्हें दग्धाक्षर कहा जाता है।

इन पाँच अक्षरों में से कोई भी अक्षर छन्द के आदि में न आना चाहिए। इस विषय में भानु कवि का यह प्रसिद्ध दोहा याद कर लेना चाहिए—

दीजो भूलि न छन्द के, आदि झ ह र भ ष कोय,
दग्धाक्षर के दोष तें, छन्द दोषयुत होय।

अपवाद

अब यह तो सम्भव नहीं है कि ये अक्षर छन्द के आदि में कभी आवें ही नहीं। आचार्यों ने नियम बनाकर उसमें अपवाद रख दिया। अपवाद यह है—

मंगल सुरवाचक शब्द, गुरु होवे पुनि आदि
दग्धाक्षर को दोष नहीं, अरु गणदोषहि वादि।

अर्थात् यदि शब्द मंगलवाचक हो या देवतावाचक हो, या दीर्घ हो, तो दग्धाक्षर का दोष नहीं लगता। गणों में भी जो अशुभ गण माने गये हैं वे भी मंगलपरक और देवपरक होने से अशुभ नहीं रहते—(गणों की बात आगे आएगी)।

उदाहरण देखिए—

भारतीय जन ! वेदभारती, ध्यान दे सुनहु वो पुकराती
दोष-हीन समता सदा गहो, छोड़ दो विषमता सुखी रहो।

यहाँ दग्धाक्षर 'भ' दीर्घस्वर युक्त होने से दोषयुक्त नहीं माना जाता।
राम आगे चले मध्य सीता चली, बन्धु पाछे भये सोभ सोभै भली।
देखि देही सबै कोटिधा कै बनो, जीव जीवेश के बीच माया मनो।
यहाँ भी दग्धाक्षर 'र' दीर्घस्वर युक्त है तथा देवतावाचक शब्द का अवयव है अतः दग्धाक्षर के दोष से युक्त नहीं।

शुभ और अशुभ गण

गणों में भी शुभ और अशुभ गण माने जाते हैं। मगण, नगण, भगण और यगण ये चार गण शुभ हैं तथा शेष चार जगण, रगण, सगण और तगण अशुभ हैं। दग्धाक्षरों की तरह इन अशुभ गणों को भी छन्द के आदि में नहीं रखना चाहिए। पर ऊपर दग्धाक्षरों के अपवाद में जो बातें बतलाई हैं वे अशुभ गणों पर भी घटित होती हैं। अर्थात्, मंगलवाचक और देवतावाचक शब्दों के रहने से गण-दोष नहीं माना जाता। उदाहरण देखिए—

मुकुन्द चाहे यदुवंश के बनें
रहें सदा या वह गोपवंश के।
न तो सकेंगे ब्रजभूमि भूल वे
न भूल देगी ब्रजमेदिनी उन्हें। (हरिऔध)

यहाँ आरम्भ में मुकुन्द जगणांत शब्द है पर देवतावाचक होने के कारण दोषयुक्त नहीं माना जाता।

ऐसे ही—

महेश के महत्व का विवेक बार-बार हो
अखण्ड एक तत्त्व का, अनेकधा विचार हो ।
बिगाड़ के समाज के, प्रबन्ध का सुधार हो ।
प्रवोण पंचराज के प्रपंच का प्रचार हो ।

(नाथूराम शंकर)

इसमें 'महेश' यद्यपि जगण है पर देवतावाचक होने से दोषावह नहीं ।
इसी प्रकार 'राम आगे चले मध्य सीता चली' वाले पद्य के आदि में
'रगण' है पर देवतावाचक होने के कारण वह दोषयुक्त नहीं माना जाता ।
इसी तरह और गणों के सम्बन्ध में भी समझ लेना चाहिए । जैसे हमने
पहले कहा है, यह विचार केवल श्रद्धालु कवियों के लिए रह गया है ।
महाकवि सब गणों का छन्द के आदि में निस्संकोच व्यवहार करते हैं ।
जैसे—

सखि, नील नभस्सर में उतरा ।

यह हँस अहा तरता तरता ॥

अब तारक-मौक्तिक शेष नहीं ।

निकला जिनको तरता-तरता ॥

यहाँ 'सखिनी' (अन्त गुरु) सगण है पर उसका प्रयोग मैथिलीशरण
जी ने पद्य के आदि में किया है ऐसे ही अन्य महाकवियों ने भी किया है ।

गणों के देवता और फल

छन्दः शास्त्र के आचार्यों ने गणों के पृथक्-पृथक् देवता तथा उनके शुभाशुभ फल माने हैं। नीचे दी हुई तालिका से यह बात स्पष्ट हो जाएगी :

गण	रूप	उदाहरण	देवता	फल	शुभ या अशुभ
मगण	५ ५ ५	वासंती	भूमि	लक्ष्मी	शुभ
नगण	। । ।	भरत	स्वर्ग	सुख	शुभ
भगण	५ । ।	ब्राह्मण	चन्द्रमा	यश	शुभ
यगण	। ५ ५	अजन्मा	जल	वृद्धि	शुभ
रगण	५ । ५	कामिनी	अग्नि	मृत्यु	अशुभ
जगण	। ५ ।	रमेश	सूर्य	रोग	अशुभ
सगण	। । ५	कमला	वायु	परदेश गमन	अशुभ
तगण	५ ५ ।	पाषाण	आकाश	शून्य	अशुभ

तुक

किसी पद्य के चरणों के अन्त में जब एक जैसे स्वर सहित अक्षर आते हैं तब उन अक्षरों की आवृत्ति को—वर्ण मैत्री को—तुक कहा जाता है। हिन्दी के मात्रिक छन्दों में प्रायः तुकान्त कविता ही होती रही है। तुक से कविता में एक प्रकार की रोचकता तथा कर्णसुखदता आ जाती है। पर ऐसी बात नहीं कि बिना तुक के कविता बन ही नहीं सकती। संस्कृत वृत्तों में तुक नहीं है पर उनका माधुर्य कम नहीं होने पाया। पाँच मात्राओं का तुक उत्तम, चार मात्राओं का मध्यम, तीन मात्राओं का निम्न तथा दो मात्राओं का तुक त्याज्य माना जाता है। हिन्दी में प्रायः निम्नलिखित पाँच प्रकार की तुकान्त कविता की जाती है :

(१) एक प्रकार ऐसा है जिसमें चारों चरणों की तुक परस्पर मिलती है, जैसे सवैये और कवित्त में। इसे सर्वान्त्य कहा जाता है।

(२) एक प्रकार वह है जिसमें केवल सम चरणों—दूसरे और चौथे चरणों—में तुक मिलती है जैसे दोहे या बरबै में। इसे समान्त्य कहा जाता है।

(३) एक प्रकार वह है जिसमें विषम चरणों में—पहले और तीसरे में—तुक मिलती है, जैसे सोरटे में। इसका नाम विषमान्त्य है।

(४) चौथा प्रकार वह है जिसमें विषम चरण की सम चरण के साथ अर्थात् पहले की दूसरे के साथ तथा तीसरे की चौथे चरण के साथ तुक मिलती है जैसे चौपाई में। इसे विषमसमान्त्य कहा जाता है।

(५) पाँचवाँ प्रकार वह है जिसमें सम की सम के साथ तथा विषम की विषम के साथ अर्थात् दूसरे चरण की चौथे चरण के साथ और पहले चरण की तीसरे चरण के साथ तुक मिलती है। जैसे निम्नलिखित पद्य में—

लिखकर लोहित लेख, डूब गया है दिन अहा ।

व्योम-सिंधु सखि देख, तारक-बुद्बुद दे रहा ॥

सोरटे में प्रायः पहले चरण की तुक तीसरे चरण के साथ मिला करती है पर इसमें दूसरे चरण की तुक चौथे चरण से भी मिलती है। अतः यह समान्त्य-विषमान्त्य नामक पाँचवाँ प्रकार है।

छठा अध्याय

प्रत्यय प्रकरण

प्रथम अध्याय में हम लिख आए हैं कि वर्णिक या मात्रिक छन्द की एक-एक जाति के कई-कई भेद हो सकते हैं। उन सब भेदों के लक्षण और उदाहरण देना असम्भव-सा है। फिर सारे-के-सारे भेद प्रचलित भी नहीं होते। हमने पिछले अध्यायों में उक्ता, अत्युक्ता आदि वर्णिक जातियों तथा चान्द्र, पाक्षिक आदि मात्रिक जातियों के प्रसिद्ध-प्रसिद्ध भेदों का ही वर्णन किया है। इस अध्याय में हम वह रीति बतलाएँगे जिससे आप यह जान सकेंगे कि एक जाति के पृथक्-पृथक् कितने भेद बन सकते हैं। जिस रीति से ये भेद जाने जाते हैं उसे छन्दःशास्त्र में प्रत्यय कहा जाता है। प्रत्यय का अर्थ है ज्ञान। ज्ञान के साधन को भी छन्दःशास्त्र में प्रत्यय कह दिया जाता है। छन्दःशास्त्र के अनुसार प्रत्यय का यह लक्षण होगा— जिस उपाय के द्वारा छन्दों के पृथक्-पृथक् रूप तथा संख्या आदि का ज्ञान हो उसे प्रत्यय कहते हैं।

वैसे तो प्रत्यय नौ प्रकार के होते हैं, पर मुख्य प्रत्यय चार हैं, जिनके ये नाम हैं—संख्या, प्रस्तार, नष्ट और उद्दिष्ट। हम इस अध्याय में इन्हीं का वर्णन करेंगे।

संख्या प्रत्यय

जिसके द्वारा वर्णिक और मात्रिक छन्दों की प्रत्येक जाति के भेदों या रूपों की संख्या का पता लगाया जा सके उसे संख्या प्रत्यय कहा जाता है।
वर्णछन्दों के रूपों की संख्या जानने की रीति—

मान लीजिए कि आप आठ वर्णों के छन्द के रूपों की संख्या जानना चाहते हैं।

(१) सबसे पहले आप एक पंक्ति में क्रमशः ८ संख्याएँ १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८ करके लिखिए ।

(२) फिर प्रथम पंक्ति में जो १ है उसके नीचे २ लिखिए । इस '२' को दुगुना करके २ के नीचे लिखिए । इस दुगुने अंक को फिर दुगुना करके ३ के नीचे लिखिए । इस प्रकार पूर्व संख्या को दुगुना कर-करके उत्तरसंख्या के नीचे लिखते जाइए । अन्तिम संख्या ८ वर्णों के रूपों की होगी, जैसे—

वर्णसंख्या	१	२	३	४	५	६	७	८
रूपसंख्या	२	४	८	१६	३२	६४	१२८	२५६

इसका अर्थ यह हुआ कि आठ वर्णों वाले छन्द के कुल रूप २५६ बन सकते हैं (अब देखिए पीछे अनुष्टुप् जाति के कितने भेद हमने कोष्ठक में दिये हैं) ।

इस तरह जितने वर्णों के छन्द के रूपों की संख्या जाननी हो उतनी संख्याएँ एक पंक्ति में लिख लें । उसके नीचे फिर उपरिलिखित प्रकार से दूने-दूने अंक लिखते जाइए । अन्तिम संख्या उत्तर की संख्या होगी ।

मात्रिक छन्द की संख्या जानने की रीति

(१) जितनी मात्राओं के छन्द के रूपों की संख्या का पता लेना हो उतनी संख्याएँ क्रमशः लिख लें । जैसे हमने ग्यारह मात्राओं के छन्द के रूपों को जानना है । हम ग्यारह संख्याएँ इस प्रकार लिख लेंगे :

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११

(२) अब १ अंक के नीचे १ लिखिए । २ के नीचे २ । और ३ के नीचे ३ । फिर चौथे अंक के नीचे पिछले ३ और २ अंकों का योग करके ५ लिखिए । ५वें अंक के नीचे पिछले दो अंकों का जोड़कर ८ लिखिए । इसी तरह करते जाइए । जो अन्तिम संख्या आएगी वह ग्यारह मात्राओं के छन्द के कुल रूपों की होगी ।

मात्रा संख्या	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११
रूप संख्या	१	२	३	५	८	१३	२१	३४	५५	८६	१४४

पीछे देखिए रौद्र जाति और उसके भेद ।

प्रस्तार प्रत्यय

प्रस्तार का अर्थ है विस्तार । किस छन्द का कितना विस्तार है—वह किस-किस रूप में मिलता है—यह प्रस्तार द्वारा जाना जाता है । प्रस्तार से वर्णछन्द या मात्रा छन्द की किसी जाति के सब रूपों का ज्ञान हो जाता है ।

वर्ण प्रस्तार की रीति

(१) जितने वर्णों की जाति का आप प्रस्तार जानना चाहते हैं उतने गुरु आप प्रथम पंक्ति में रखिए । उदाहरण के लिए आप सुप्रतिष्ठा नामक ५ वर्णों की जाति का प्रस्तार जानना चाहते हैं । आप प्रथम पंक्ति में ५ गुरु रख दीजिए :

५ ५ ५ ५ ५

(२) दूसरी पंक्ति में बाईं ओर से जो सर्वप्रथम गुरु है, उसके नीचे आप लघु रख दीजिए । इसके आगे जैसे ऊपर चिह्न हैं वैसे ही नीचे उतार लीजिए :

५ ५ ५ ५ ५

। ५ ५ ५ ५

(३) अब तीसरी पंक्ति लिखिए । दूसरी पंक्ति में बाईं ओर से जो सर्वप्रथम गुरु है उसके नीचे लघु लिखिए । उससे आगे जैसा ऊपर वैसा नीचे । दूसरी पंक्ति में बाईं ओर जो सर्वप्रथम लघु रह गया है, उसके नीचे गुरु लिख दीजिए ।

S	S	S	S	S
I	S	S	S	S
S	I	S	S	S

(४) चौथी पंक्ति भी तीसरी पंक्ति की तरह लिखिए और तब तक ऐसे ही करते जाइए जब तक अन्त में सब लघु न आ जाएँ । देखिए—

(१) S S S S S	(१७) S S S S I
(२) I S S S S	(१८) I S S S I
(३) S I S S S	(१९) S I S S I
(४) I I S S S	(२०) I I S S I
(५) S S I S S	(२१) S S I S I
(६) I S I S S	(२२) I S I S I
(७) S I I S S	(२३) S I I S I
(८) I I I S S	(२४) I I I S I
(९) S S S I S	(२५) S S S I I
(१०) I S S I S	(२६) I S S I I
(११) S I S I S	(२७) S I S I I
(१२) I I S I S	(२८) I I S I I
(१३) S S I I S	(२९) S S I I I
(१४) I S I I S	(३०) I S I I I
(१५) S I I I S	(३१) S I I I I
(१६) I I I I S	(३२) I I I I I

इसका अर्थ यह हुआ कि ५ वर्णों की जाति के ३२ पृथक्-पृथक् रूप बन सकते हैं । एक रूप ऐसा होगा जिसमें प्रत्येक पाद में पाँचों वर्ण गुरु होंगे । दूसरा ऐसा जिसमें प्रत्येक पाद में एक यगण तथा दो गुरु होंगे । पन्द्रहवाँ रूप ऐसा होगा जिसके प्रत्येक पाद में एक भगण तथा लघु और गुरु होंगे । इस प्रकार ३२ प्रकार के भिन्न-भिन्न छन्द आप ५ वर्णों की जाति के बना

सकते हैं। अत्र संख्या प्रत्यय से भी देख लें कि ५ वर्णों की जाति के कितने रूप बन सकते हैं। वही ३२ उत्तर आएगा।

अत्र सात वर्णों की उष्णिक् जाति का प्रस्तार देखिए :

उष्णिक् प्रस्तार ७ वर्ण।

ॐ (१) ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ	(२२) । ऽ । ऽ । ऽ ऽ
(२) । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ	(२३) ऽ । । ऽ । ऽ ऽ
(३) ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ	(२४) । । । ऽ । ऽ ऽ
(४) । । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ	†(२५) ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ
(५) ऽ ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ	(२६) । ऽ ऽ । । ऽ ऽ
(६) । ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ	(२७) ऽ । ऽ । । ऽ ऽ
(७) ऽ । । ऽ ऽ ऽ ऽ	(२८) । । ऽ । । ऽ ऽ
(८) । । । ऽ ऽ ऽ ऽ	(२९) ऽ ऽ । । । ऽ ऽ
(९) ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ ऽ	(३०) । ऽ । । । ऽ ऽ
(१०) । ऽ ऽ । ऽ ऽ ऽ	(३१) ऽ । । । । ऽ ऽ
(११) ऽ । ऽ । ऽ ऽ ऽ	(३२) । । । । । ऽ ऽ
(१२) । । ऽ । ऽ ऽ ऽ	(३३) ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ
(१३) ऽ ऽ । । ऽ ऽ ऽ	(३४) । ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ
(१४) । ऽ । । ऽ ऽ ऽ	(३५) ऽ । ऽ ऽ ऽ । ऽ
(१५) ऽ । । । ऽ ऽ ऽ	(३६) । । ऽ ऽ ऽ । ऽ
(१६) । । । । ऽ ऽ ऽ	(३७) ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ
(१७) ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ	(३८) । ऽ । ऽ ऽ । ऽ
(१८) । ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ	(३९) ऽ । । ऽ ऽ । ऽ
(१९) ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ	(४०) । । । ऽ ऽ । ऽ
(२०) । । ऽ ऽ । ऽ ऽ	(४१) ऽ ऽ ऽ । ऽ । ऽ
(२१) ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ	(४२) । ऽ ऽ । ऽ । ऽ

ॐ यह शिष्या नामक छन्द है।

† यह मदलेखा नामक छन्द है।

* (४३) S S S S	(६७) S S S S S
(४४) S S S	(६८) S S S S
(४५) S S S S	(६९) S S S S S
(४६) S S S	(७०) S S S S
(४७) S S S	(७१) S S S S
(४८) S S	(७२) S S S
(४९) S S S S S	(७३) S S S S S
(५०) S S S S	(७४) S S S S
(५१) S S S S	(७५) S S S S
(५२) S S S	(७६) S S S
(५३) S S S S	(७७) S S S S
(५४) S S S	(७८) S S S
(५५) S S S	(७९) S S S
(५६) S S	(८०) S S
(५७) S S S S	(८१) S S S S S
(५८) S S S	(८२) S S S S
(५९) S S S	(८३) S S S S
(६०) S S	(८४) S S S
(६१) S S S	(८५) S S S S
(६२) S S	(८६) S S S
(६३) S S	(८७) S S S
† (६४) S	(८८) S S
(६५) S S S S S S	(८९) S S S S
(६६) S S S S S	(९०) S S S

*यह समानिका नामक छन्द है ।

†यह मधुमती नामक छन्द है ।

(६१) S S S	(११०) S S
(६२) S S	(१११) S S
(६३) S S S	(११२) S
(६४) S S	(११३) S S S S
(६५) S S	(११४) S S S
(६६) S	(११५) S S S
(६७) S S S S S	(११६) S S
(६८) S S S S	(११७) S S S
(६९) S S S S	(११८) S S
(१००) S S S	(११९) S S
(१०१) S S S S	(१२०) S
(१०२) S S S	(१२१) S S S
(१०३) S S S	(१२२) S S
(१०४) S S	(१२३) S S
(१०५) S S S S	(१२४) S
(१०६) S S S	(१२५) S S
(१०७) S S S	(१२६) S
(१०८) S S	(१२७) S
(१०९) S S S	(१२८)

इस वर्णिक प्रस्तार से यह पता चल गया कि प्रत्येक भेद के समान जब चारों चरण बनाए जाएँगे तब एक वर्ण-वृत्त बन सकेगा। इस प्रकार उष्णिक जाति के १२८ भेद बन सकते हैं। हिन्दी-छन्द-रचना में प्रचलित न होने के कारण हमने उष्णिक जाति तक वर्णवृत्तों को छोड़ दिया है। उससे आगे की जातियों के मुख्य-मुख्य भेदों के लक्षण और उदाहरण दिये हैं।

मात्रिक प्रस्तार

मात्रिक प्रस्तार की रीति भी प्रायः वर्णप्रस्तार की रीति की तरह है।

जितनी मात्राओं का प्रस्तार बनाना हो उतनी मात्राएँ जितने गुरुओं के अन्दर आ सकती हों उतने गुरु प्रथम पंक्ति में रखिए। जैसे यदि छः मात्राओं का प्रस्तार बनाना हो तो छः मात्राएँ तीन गुरुओं में आ सकती हैं अतः प्रथम पंक्ति में तीन गुरु S S S रखिए। यदि ५ या ७ मात्राओं का प्रस्तार बनाना हो तो क्रमशः दो गुरुओं या तीन गुरुओं के साथ एक लघु और जोड़ दीजिए। इतना ध्यान रहे कि यह लघु आदि में बाईं ओर लगे, दाहिनी ओर नहीं। इसके बाद दूसरी पंक्ति में प्रथम गुरु के नीचे लघु रखो और उसके दाहिनी ओर ऊपर के चिह्न उतारो। बाईं ओर लघु के नीचे गुरु रख दो। यह याद रखना चाहिए कि जितनी मात्राओं का प्रस्तार हो उतनी ही मात्राएँ प्रत्येक पंक्ति में रहनी चाहिएँ, न्यूनाधिक नहीं। अतः यदि बाईं ओर पड़े हुए लघु के नीचे गुरु रख देने से भी मात्राएँ पूरी न हों तो जितनी मात्राओं की कमी पड़े उतने लघु बाईं ओर और रख देने चाहिएँ। इसके विपरीत यदि बाईं ओर पड़े हुए लघु के नीचे गुरु रखने से एक मात्रा बढ़ जाती हो तो वहाँ गुरु न रखकर लघु ही रखो। यदि बाईं ओर पड़े हुए लघु के नीचे गुरु व लघु कुछ भी रखे बिना मात्राएँ पूरी हो जाती हों तो कुछ भी न रखो—स्थान खाली रहने दो। इस प्रकार तब तक करते जाओ जब तक अन्त में सब लघु न आ जाएँ। सब लघु आ जाने पर प्रस्तार समाप्त हो जायगा। चार व पाँच मात्राओं का प्रस्तार देखिये—

चार मात्राओं का प्रस्तार

१		S	S
२			S
३		S	।
४	S		
५			

पाँच मात्राओं का प्रस्तार

(१)		।	S	S		
(२)			S	।	S	
(३)		।	।	।	S	
(४)			S	S	।	
(५)		।	।	S	।	
(६)		।	S	।	।	
(७)			S	।	।	।
(८)		।	।	।	।	।

यहाँ चार मात्राओं के तीसरे रूप में गुरु के नीचे लघु रक्खा । और बाईं ओर के लघु के नीचे गुरु रखा । इससे भी बाईं ओर जो एक और लघु पड़ा है उसके स्थान पर यदि गुरु रख दिया जावे तो मात्राएँ ५ हो जावेंगी । अतः वहाँ लघु रखा गया है । इसी तरह ५ मात्राओं के प्रस्तार के चौथे रूप में बाईं ओर के लघु के नीचे कुछ भी नहीं रखा गया, क्योंकि ५ मात्राएँ वहाँ कुछ रखे बिना ही पूरी हो गई हैं । अब छठी रागी और सातवीं लौकिक मात्रिक जातियों का प्रस्तार देखिए—

रागी जाति का प्रस्तार

छः मात्राओं का प्रस्तार

- (१) S S S
(२) । । S S
(३) । S । S
(४) S । । S
(५) । । । । S
(६) । S S ।
(७) S । S ।
(८) । । । S ।
(९) S S । ।
(१०) । । S । ।
(११) । S । । ।
(१२) S । । । ।
(१३) । । । । । ।

लौकिक जाति का प्रस्तार

७ मात्राओं का प्रस्तार

- (१) । S S S
(२) S । S S

(३) । । । S S

(४) S S । S

(५) । । S । S

(६) । S । । S

(७) S । । । S

(८) । । । । S

(९) S S S ।

(१०) । । S S ।

(११) । S । S ।

(१२) S । । S ।

(१३) । । । । S ।

(१४) । S S । ।

(१५) S । S । ।

(१६) । । । S । ।

(१७) S S । । ।

(१८) । । S । । ।

(१९) । S । । । ।

(२०) S । । । । ।

(२१) । । । । । ।

मात्रिक प्रस्तार से यह बात समझनी चाहिए कि जिस छन्द के चारों पादों में प्रस्तार के एक से रूप न हों वही मात्रिक छन्द है। जहाँ एक से रूप चारों चरणों में हों वहाँ वर्णिक वृत्त होगा।

नष्ट प्रत्यय

जिस प्रत्यय के द्वारा प्रस्तार की सहायता के बिना किसी वर्णिक या मात्रिक छन्द का कोई भी अज्ञात रूप जाना जा सकता है उस प्रत्यय का नाम नष्ट प्रत्यय है। यद्यपि प्रस्तार की प्रक्रिया से आप किसी जाति का कोई-सा रूप जान सकते हैं पर यदि आप प्रस्तार करने के पन्द्रहे में न पड़ना चाहते हों और शीघ्रता से यह जानना चाहते हों कि अमुक जाति का ग्यारहवाँ, दसवाँ या बारहवाँ रूप क्या होगा तो वहाँ आप नष्ट प्रत्यय की सहायता से उस रूप का पता लगा सकते हैं। अधिक वर्णों या मात्राओं की जातियों का प्रस्तार निकालने के लिये बहुत समय लगता है। फिर कहीं थोड़ी-सी चूक हो गई तो सारा परिश्रम व्यर्थ हो जाता है। इतना परिश्रम न करना पड़े, और काम भी बन जाए इसलिये ऐसे स्थलों पर नष्ट प्रत्यय उपयोगी सिद्ध होता है। वर्णिक और मात्रिक नष्ट प्रत्यय के क्रमशः उदाहरण देखिए।

वर्णिक नष्ट की रीति

मान लीजिए आप से कोई प्रश्न करता है कि सुप्रतिष्ठा नामक ५ वर्णों की जाति का १२वाँ रूप क्या होगा, तो आप नष्ट प्रत्यय की सहायता से इसका उत्तर यों दीजिए।

(१) आपने १२वाँ रूप जानना है। १२ संख्या सम है। सम संख्या के लिए आप लघु रखिये और विषम संख्या के लिए गुरु (२, ४, ६, ८, १० इत्यादि संख्याएँ सम हैं और १, ३, ५, ७, ९ आदि संख्याएँ विषम हैं।) पहली पंक्ति यों लिखिए—

१

।

(२) अब सम संख्या को दो से भाग दीजिए। भजनफल यदि सम है तो आगे लघु लिखिए यदि विषम है तो गुरु। १२ को २ से भाग दिया तो

भजनफल ६ आया । ६ सम संख्या है । अतः दूसरे स्थान पर फिर लघु आया, जैसे—

१	२

(३) अब ६ को २ से फिर भाग दिया । भजनफल तीन आया जोकि विषम है । अतः तीसरे स्थान पर गुरु आया । जैसे—

१	२	३
		S

(४) अब ऊपर जो तीन विषम भजनफल आया है उसमें एक और जोड़कर उसे सम (चार) बना लीजिए । चार को २ से फिर भाग दीजिए । दो आजायगा । दो सम है । अतः चौथे स्थान पर लघु रखिए । जैसे—

१	२	३	४
		S	

(५) अब २ को २ से फिर भाग दीजिए । उत्तर में १ आयगा । १ विषम है । अतः पाँचवें स्थान पर गुरु लगाइए ।

१	२	३	४	५
		S		S

अब पाँचों वर्ण पूरे हो गये । ५ वर्णों की सुप्रतिष्ठा नामक वर्णिक जाति का यही १२वां रूप है । अब पीछे इसी जाति का प्रस्तार देख लीजिए । १२वां रूप यही मिलेगा ।

प्रक्रिया यह हुई कि जिस संख्या का रूप जानना हो वह संख्या यदि सम है तो पहले लघु लिखो यदि विषम है तो गुरु लिखो । फिर उस संख्या को २ से भाग दो । भजनफल सम है तो लघु, विषम है तो गुरु लिखो । विषम भजनफल में एक और जोड़कर उसे सम बना लो और दो पर उसे फिर भाग दो । भजनफल सम हो तो लघु लिखो, विषम हो तो गुरु लिखो । इसी तरह तब तक करते जाओ जब तक उस जाति के सारे वर्णों की संख्या पूरी न हो जाए । एक उदाहरण और देखिए

७ वर्ण की उष्णिक् जाति का १५वां भेद इस तरह निकालिए—

१	२	३	४	५	६	७
५	।	।	।	५	५	५

अब देखिए उष्णिक् जाति का प्रस्तार । १५वां भेद यही मिलेगा ।

मात्रिक नष्ट की रीति

जितनी मात्राओं के छन्द का आप नष्ट अर्थात् अज्ञात रूप ज्ञात करना चाहते हैं उतने ही लघु के चिह्न आप एक पंक्ति में लिख लीजिए । मान लीजिए हमें छः मात्राओं के छन्द का ऽवां रूप जानना है तो हम छः लघु-चिह्न पहले एक पंक्ति में लिख लेंगे । जैसे—

।	।	।	।	।	।
---	---	---	---	---	---

फिर संख्या प्रत्यय की सहायता से, जिसे हम पीछे बता चुके हैं, छः मात्राओं के जितने रूप बन सकते हैं उतने इन लघु चिह्नों के ऊपर लिख देंगे । जैसे—

१	२	३	५	८	१३
।	।	।	।	।	।

अर्थात् एक मात्रा का एक ही रूप बन सकता है अतः प्रथम लघु चिह्न के ऊपर १ लिख दिया । दूसरे लघु चिह्न पर २ लिखा गया है, क्योंकि दो मात्राओं के दो ही रूप बन सकते हैं । तीसरे के ऊपर ३ लिखा गया है क्योंकि तीन मात्राओं के तीन ही रूप बनेंगे । चौथे के ऊपर ५ है, क्योंकि चार मात्राओं के ५ ही रूप बनते हैं । पाँचवें चिह्न के ऊपर आठ है, क्योंकि ५ मात्राओं के ८ ही रूप बनेंगे । छठे लघु-चिह्न पर १३ है क्योंकि छः मात्राओं के १३ रूप ही बनते हैं (यद्यपि यह बात संख्या-प्रत्यय लिखने के समय समझा दी गई है, फिर भी हमने यहाँ पुनरावृत्ति इसलिए कर दी कि छात्र मात्रिक नष्ट को सुगमता से हृदयंगम कर सकें ।)

अब हमारे सामने यह रूप पड़ा है ।

१	२	३	५	८	१३
।	।	।	।	।	।

(२) अब जितनी मात्राओं के छंद का नष्ट रूप पूछा गया है उतनी मात्राओं के भेदों की पूर्ण संख्या में से नष्ट रूप की संख्या को घटा दो । हमने छः मात्राओं की जाति का ऽवाँ रूप जानना है । छः मात्राओं के भेदों की पूर्ण संख्या १३ होती है । अतः हम १३ में से ८ घटा देंगे । शेष बचेंगे ५ ।

(३) अब यह देखेंगे कि लघुचिह्नों के ऊपर हमने जो अंक लगाए हैं, दाहिनी ओर से उनमें से कौन-कौन सा अंक ५ से घट सकता है । जो अंक घट जाए उसके नीचे गुरु लगाइए, जो न घटे उसके नीचे लघु लगाइए । इस तरह तब तक करते जाइए जब तक शेषांक पूरा न घट जाए । ५ में से १३ और ८ घट नहीं सकते अतः उनके नीचे लघु-लघु लगे । उसके अनंतर ५ का अंक है । ५ का अंक ५ से घट गया अतः वहाँ गुरु लगा । शेष कुछ न बचा । ३, २, और १ के अंक के नीचे लघु लगे, क्योंकि ये घट नहीं सके— ५ अंक ५ से घटकर शून्य हो गया था । इस तरह यह रूप बना ।

१	२	३	५	८	१३
			५		

(४) अब आप ऐसा कीजिए कि गुरु चिह्न के आगे जहाँ-जहाँ लघु चिह्न पड़े उस लघु चिह्न को मिटा दीजिए (गुरु से अगला केवल एक-एक लघु चिह्न मिटाना है) । हमने गुरु चिह्न के आगे का एक लघु चिह्न मिटा दिया । जैसे :

१	२	३	५	८	१३
			५		

अब यह रूप ।।।५। छः मात्राओं के छंद का ऽवाँ रूप निकल आया है । देखिए पीछे छः मात्राओं के प्रस्तार को । प्रस्तार का लम्बा-चौड़ा भगाड़ा किए बिना ही हमें छः मात्राओं के छंद का ऽवाँ रूप शत हो गया है।

एक उदाहरण और लीजिए । ७ मात्राओं के छंद का १३वाँ रूप इस प्रकार जाना जा सकता है ।

१	२	३	५	८	१३	२१

७ मात्राओं के रूपों की पूर्ण संख्या २१ में से १३ घटा दिये । शेष ८ रहे । अब दाहिनी ओर से लघु चिह्नों के ऊपर लगे अंकों को ८ से घटाइए । २१ और १३, घटते नहीं । अतः उनके नीचे लघु चिह्न लगे । ८ से ८ घट गया । अतः वहाँ गुरु का चिह्न लग गया । उससे पहले चार लघु लगे, क्योंकि वे घटाये नहीं जा सके । अब यह रूप बना ।

१	२	३	५	८	१३	२१
				८		

अब गुरु चिह्न के आगे का एक लघु चिह्न मिटा दीजिए । यह रूप ।।।।८। बन गया । ७ मात्राओं के छंद का यही तेरहवाँ रूप है । अब देखिए पीछे ७ मात्राओं की लौकिक नामक जाति का प्रस्तार । तेरहवाँ रूप वहाँ यही मिलेगा ।

उद्दिष्ट प्रत्यय

जिसके द्वारा प्रस्तार किये बिना भी किसी उद्दिष्ट रूप की संख्या जानी जा सकती हो उसे उद्दिष्ट प्रत्यय कहा जाता है । उद्दिष्ट का अर्थ है 'बतलाया हुआ ।' आपसे कोई कहता है कि सात वर्णों की जाति का यह रूप ८८८।।।८ कौन्सा है तो आप उद्दिष्ट प्रत्यय की सहायता से बतला सकते हैं कि यह सात वर्णों की जाति का ५७ वाँ रूप है । इसी प्रकार ७ मात्राओं के मात्रिक छंद का यह रूप ।।।८।।। सोलहवाँ है यह आप उद्दिष्ट प्रत्यय की प्रक्रिया से बिना प्रस्तार किये बतला सकते हैं । क्रमशः उदाहरण देखिए ।

वर्णों उद्दिष्ट की रीति

हमने सात वर्णों की जाति के ८८८।।।८ इस रूप का पता लगाना

है कि यह उस जाति का कौनसा रूप है। इसे हम उद्दिष्ट रूप कहेंगे। आप इस उद्दिष्ट रूप को पहले लिख लीजिए।

५ ५ ५ । । । ५

(२) फिर बाईं ओर से क्रमशः इन चिह्नों के ऊपर एक से लेकर दुगुने-दुगुने अंक लीजिए—

१	२	४	८	१६	३२	६४
५	५	५	।	।	।	५

(३) अब लघुचिह्नों के ऊपर जो अंक हैं उन्हें जोड़कर उसमें एक और मिला दीजिए। जो योगफल आवे वह उद्दिष्ट रूप की संख्या होगी। लघुचिह्नों के ऊपर $८ + १६ + ३२$ हैं। इनको जोड़ने से ५६ बना। एक बीच में और जोड़ दिया गया। ५७ योगफल हो गया। यही उत्तर है। अर्थात् यह रूप ५ ५ ५ । । । ५ ७ वर्णों की जाति का ५७ वाँ रूप है। अब पीछे उष्णिक जाति का प्रस्तार देख लीजिए।

मात्रिक उद्दिष्ट की रीति

उद्दिष्ट रूप को आप पहले लिख लीजिए।

। । । ५ । ।

(२) अब यह देखिए कि एक से लेकर सात मात्राओं तक के छंद में प्रत्येक के कितने रूप होते हैं, अर्थात् अब यहाँ संख्या प्रत्यय की सहायता से एक-एक चिह्न के ऊपर उस-उसके जितने रूप बन सकते हों उनको बाईं ओर से उद्दिष्ट रूप के ऊपर इस तरह से लिखिये कि वे गुरु चिह्न के तो ऊपर और नीचे दोनों तरफ आवें और लघु-चिह्न के केवल ऊपर ही आवें। ७ मात्राओं के छंद की संख्या क्रमशः यह होगी १ २ ३ ५ ८ १३ २१। इन अंकों को उपरिलिखित प्रकार से उद्दिष्ट रूप पर क्रमशः बाईं ओर से लिखने पर यह रूप बन जाएगा :

१	२	३	५	१३	२१
।	।	।	५	।	।
			८		

(३) अब गुरु-चिह्नों के ऊपर रखे हुए अंकों को जोड़ लीजिए। और

उन्हें ७ मात्राओं के छंद की पूर्ण संख्या से घटा दीजिए । जो शेष रहे वह उत्तर होगा । यहाँ गुरुचिह्न के ऊपर केवल ५ का अंक है । ७ मात्राओं की पूर्ण संख्या २१ है । २१ में से ५ घटा दिये । शेष सोलह बचे । यह उत्तर आगया, अर्थात् ७ मात्राओं के प्रस्तार में । । । ५ । । यह रूप सोलहवाँ है । अब देखिये पीछे सात मात्राओं का प्रस्तार । वहाँ यह रूप सोलहवाँ ही मिलेगा ।

परिशिष्ट १

छात्रों के अभ्यास के लिये हम नीचे कुछ प्रश्न लिखते हैं ।

(१) निम्नलिखित पद्यों में बतलाइए कौन-कौनसा छन्द है :

(क) सुत सहज-सनेहों का समाधार-सा है ?

सदय हृदय है औ सिन्धु-सौजन्य का है ।

परम सरल है औ शिष्ट है शान्त-धी है,

वह बहुविनयी है मूर्ति-आरमीयता है ।

(ख) तुम सम मृदु-भाषी धीर-सद्बु-ज्ञानी,

उस गुणमय का है दिव्य सम्वाद लाया ।

पर मुक्त दुखदग्धा भाग्यहीना-महा की

यह दुखमय दोषा वैसि ही है स-दोषा ।

(ग) मेरे प्यारे स-कुशल सुखी और सानन्द तो हैं ?

कोई चिन्ता मलिन उनको तो नहीं है बनाती ?

ऊधो छाती वदन पर है म्लानता भी नहीं तो ?

हो जाती है हृदयतल में तो नहीं वेदनायें ?

(घ) मीठे-मेवे मृदुल नवनी और पक्काज नाना ।

धीरे प्यारों-सहित सुत को कौन होगी खिलाती ।

प्रातः पीता सु-पय कजरी गाय का चाव से था ।

हा ! पाता है न अब उसको प्राण-प्यारा हमारा ।

(ङ) परम-आदर-पूर्वक प्रेम से,

विपुल-बात वियोग-व्यथा-हरी ।

हरिसखा कहते इस काल थे,

बहुदुखी अ-सुखी ब्रज-भूप से ॥

- (च) निज मथित-कलेजे को करों साथ थामे,
कुछ समय यशोदा ने सुनी सर्व बातें ।
फिर बहु-विमना हो व्यग्र हो कम्पिता हो,
निज-सुअन-सखा से यों व्यथा-साथ बोलीं ।
- (छ) आवेगों से विपुल-विकला शीर्णकाया कृशांगी
चिन्ता-दग्धा व्यथित-हृदया शुष्क-ओष्ठा अधीरा ।
आसीना थीं निकट पति के अम्बुनेत्रा यशोदा,
खिन्ना दीना विनत-वदना मोह-मग्ना मलीना ।
- (ज) ब्रजधराधिप मौन-निकेत भी,
बन रहा अधिकाधिक-शांत था ।
तिमिर भी उसके प्रति-भाग में,
स्व-विभुता करता विधि-बद्ध था ।
- (झ) जो राज-पंथ वन-मेदिनि में बना था ।
धीरे उसी पर सधा रथ जा रहा था ।
हो हो विमुग्ध लखते सह-सारथी थे ।
ऊधो छटा विपिन की अति ही-अनूठी ।
- (ञ) सरोवरों की सुषमा स-कंजता,
सु-मेरु औ निर्भर आदि रम्यता ।
न थी यथातथ्य उन्हें विमोहती,
अनन्त-सौन्दर्यमयी वनस्थली ।
- (ट) कलित-किरण-माळा, बिम्ब-सौन्दर्य-शाली,
सु-गगन तल-शोभी दिव्य-छाया पती का ।
छविमय करती थी दर्शकों के दृगों को ।
जब रवितनया ले अंक में क्रीडती थी ।
- (ठ) एकाकी ब्रजदेव एक दिन थे, बैठे हुए सद्य में ।
उरसम्ना-ब्रजभूमि के स्मरण से उद्विग्नता थी बड़ी ।

ऊधो-संज्ञक-ज्ञान-वृद्ध उनके जो एक सन्मित्र थे ।

वे आये इस काल ही सदन में आनन्द में मग्न से ।

(ङ) जो राधा वृष-भानु-भूप-तनया स्वर्गीय दिव्यांगना ।
शोभा है ब्रज-प्रान्त की अरुणि की स्त्री जाति की वंश की ।
होगी हा ! वह देवि मग्न अति ही मेरे वियोगाब्धि में ।
जो हो संभव तात पोत बनके तो आण देना उसे ।

(ढ) ऐसे सारी ब्रज-अरुणि के एक ही लाड़िले को ।
छीना कैसे किस कुटिल ने क्यों कहाँ कौन बेला ।
हा ! क्यों घोला गरल उसने स्निग्धकारी रसों में ।
कैसे छीटा सरस कुसुमोद्यान में कंदकों को ॥

(ण) पहुँचते जब थे गृह में किसी,
ब्रज लला हँसते मृदु बोलते ।
ग्रहण थीं करती अति चाव से,
तब उन्हें सब सद्यनिवासिनी ।

(त) काले कुत्सित कीट का कुसुम में कोई नहीं काम था ।
कांटे से कमनीयता कमल में क्या है न कोई कमी ।
दंडों में कब ईश के बिपुलता है ग्रंथियों की भली ।
हा ! दुर्दैव प्रगल्भते ! अपदुता तू ने कहाँ की नहीं ।

(थ) यदपि नृपति ने है प्यार ही से बुलाया,
पर कुशल हमें तो है न होती दिखाती ।
प्रिय विरह घटायें घेरती आ रही हैं,
घहर घहर देखो हैं कलेजा कंपाती ।

(द) जो अन्य ग्राम दिग गोकुल ग्राम के थे ।
प्राणी अनेक उन ग्राम समस्त के भी ।
दूबे अपार-दुख-सागर में सबामा ।
आ के खड़े निकट नन्द-निकेत के थे ।

- (ध) जो भीड़ आलय-समीप ब्रजेश के थी,
 सो कातरा बहु बनी भय-कंस से थी ।
 संचालिता विषमता करती उसे थी;
 संताप की विविध-संशय की दुखों की ।
- (न) जब हुआ ब्रज जीवन जन्म था,
 ब्रज प्रफुल्लित था कितना हुआ ।
 उमगती कितनी नैदरानि थीं,
 पुलकता कितना चित नन्द था ।
- (प) अनूठी-आभा से सरस-सुषमा से सुरस से,
 बना जो देती थी बहुगुणमयी भू-विपिन की ।
 निराले-फूलों की विविध-दल-वाली अनुपमा ।
 जड़ी बूटी नाना बहु-फलवती थीं विलसती ।
- (फ) सुकूल-वाली कलि-कालिमापहा,
 विचित्र-लीला-मयि वीचि-संकुला ।
 विराजमाना बन एक ओर थी,
 कलामयी केलिवती-कलिन्दजा ।
- (ब) यों ही प्रबोध करते पुर-वासियों का,
 नाना-कथा परम-शान्ति-करी सुनाते ।
 आये ब्रजाधिप-निकेतन पास ऊधो,
 पूरा प्रसार करती कहूँ जहाँ थी ।
- (भ) मुकुन्द आते जब थे अरण्य में,
 प्रफुल्ल हो तो करते विहार थे ।
 विलोकते थे सु-विलास वारि का,
 कलिन्दजा के कल कूल पै खड़े ।
- (म) स-मोद बैठे गिरि-सानु पै कभी,
 अनेक थे सुन्दर-दृश्य देखते ।

बने महा-उत्सुक वे कभी छुटा,
विलोकते निर्भर-नीर की रहे ॥

(य) कथन यों करते ब्रज की व्यथा,
गगन-मण्डल लोहित हो गया ।
इस लिये बुध-ऊधव को लिये,
सकल-गोप गये निज-गोह को ।

(र) धीरे धीरे दिवस यह भी व्यग्रता-धाम बीते ।
लोगों द्वारा यह शुभ-समाचार आया गृहों में ।
सारी सेना निहत अरि की हो गई श्याम हाथों ।
प्राणों को ले मगध-अवनी-नाथ उद्विग्न भागा ।

(ल) पादांक पूत अथि धूलि प्रशंसनीया,
मैं बाँधती समुद्र अंचल में तुम्हें हूँ ।
होगी मुझे सतत तू बहु-शान्ति-दाता,
देगी प्रकाश तम में तिरते दृगों को ।

(व) मेरे हो तुम बंधु विज्ञ-वर हो आनन्द की मूर्ति हो ।
क्यों मैं जा ब्रज में सका न अबलौं हो जानते भी इसे ।
कैसी हैं अनुरागिनी हृदय से माता, पिता, गोपिका ।
प्यारे है यह भी छिपी न तुम से जाओ अतः प्रात ही ।

(श) ज्यों ज्यों थी रजनी व्यतीत करती औ' देखती व्योम को ।
त्यों ही त्यों उनका प्रगाढ़ दुख भी दुर्दान्त था हो रहा ।
आँखों से अविराम अश्रु बह के था शान्ति देता नहीं ।
बारम्बार असक्त-कृष्ण-जननी थीं मूर्छिता हो रहीं ।

(ष) समय था सुनसान निशीथ का,
अटल भूतल में तम-राज्य था ।
प्रलय-काल समान प्रसुप्त हो,
प्रकृति निश्चल, नीरव, शान्त थी ।

(स) बहु-ध्वनि करुणा की फैल-सी क्यों गई है,
तरु-गन मन मारे आज क्यों यों खड़े हैं।
अवनि अति-दुखी सी क्यों हमें दै दिखाती,
नभ-पर दुख-छाया-पात क्यों हो रहा है।

(ह) प्रसून यों ही न मिलिंद-वृन्द को,
विमोहता औ करता प्रलुब्ध है।
वरंच प्यारा उसका सुगंध ही,
उसे बनाता बहु-प्रीति-पात्र है।

(ङ) निज मनोहर-भाषण वृद्ध ने,
जब समाप्त किया बहु-मुग्ध हो।
अपर एक प्रतिष्ठित गोप यों,
तब लगा कहने सु गुणावली।

(त्र) समाप्त ज्यों ही इस यूथ ने किया,
अतीव प्यारे अपने प्रसंग को।
लगा सुनाने उस काल ही उन्हें,
स्वकीय बातें फिर अन्य गोप यों।

(श) कान्तार में सरिततीर सुगह्वरों में,
सोते-अनेक बहते जल-स्वच्छ के थे।
होती अजस्र उनमें ध्वनि थी अनूठी।
वे थे मनों शरद को कल-कीर्ति गाते ॥

विशेष : प्रश्न १ के सारे पद्य 'प्रिय-प्रवास' से लिये गये हैं।

(२) बतलाइए निम्नलिखित पद्यों में से कौन-से मात्रिक छंद के हैं ओ
कौन-से वर्णिक वृत्त के ? छंदों का नाम-निर्देश भी कीजिए।

(क) हे देवी, यह नियम सृष्टि में सदा अटल है,
रह सकता है वही सुरक्षित, जिसमें धल है।
निर्बल का है नहीं जगत में कहीं ठिकाना,
रक्षा-साधन उसे प्राप्त हों चाहे नाना। (छन्दःशिक्षा)

(ख) कालीदह में तू क्यों कूदा, डौंटा तो हँस बोला,
तू कहती थी और चुराना, तू मक्खन का गोला ।
छींके पर रख छोड़ेंगे सब, अब भिड़-भरा मठोला,
निकल उड़ीं वे भिड़ें प्रथम ही, भाग बचा मैं भोला ।

(छन्दःशिक्षा)

(ग) तू मङ्गला मङ्गलकारिणी है,
सङ्गत्त के धाम विहारिणी है ।
माता ! सदा पूर्ण पिता समेता,
कीजै हमारे चित में निकेता ।

(छन्दःशिक्षा)

(घ) राम गये जब ते वन माहीं,
राकस वैर करै बहुधा हीं ।
रामकुमार हमें नृप दीजै,
तौ परिपूरन यज्ञ करीजै ।

(रामचन्द्रिका)

(ङ) नहिं सतसंग जोग जपु जागा ।
नहिं दृढ़ कमल-चरन अनुरागा ।
एक बानि करुनानिधान की ।
सो प्रिय जाके गति न आन की ।

(तुलसी)

(च) साधु भक्तों में सुयोगी, संयमी बढ़ने लगे ।
सभ्यता की सीढ़ियों पै, सूरमा चढ़ने लगे ।
वेदमंत्रों को विवेकी, प्रेम से पढ़ने लगे ।
वस्त्रकों की छातियों में, शूल से गड़ने लगे ।

(छन्दःशिक्षा)

(छ) मन जाहि राचिउ मिलिहि सो बर सहज सुन्दर साँघरो ।
करुनानिधानु सुजानु सील सनेहु जानत रावरो ।

इहि भाँति गौरि-असीस सुनि सिय सहित हिय हरषित अली ।
तुलसी भवानिहि पूजि पुनि-पुनि मुदित मन मन्दिर चली ।
(तुलसी)

(ज) देव, तुम्हारे कई उपासक, कई-ढंग-से आते हैं ।
सेवा में बहुमूल्य भेंट वे, कई रंग के लाते हैं ।
धूम-धाम से साज-बाज से, वे मन्दिर में आते हैं ।
मुक्तामणि बहुमूल्य वस्तुएँ, लाकर तुम्हें चहाते हैं ।

(छन्दःशिक्षा)

(क) सिर मोर-पखौना बनो सुठौना, मञ्जु मुरलिया बाजै ।
अति छूटीं अलकैं मुख पर झलकैं, तिन पर गोरज साजै ।
गौवन के पाछे, कछनी काछे, हाथ लकुटिया सोहै ।
चलि निरखौ माई, कुँवर कन्हवाई व्रज-जन को मन मोहै ।

(छन्दःशिक्षा)

(ज) समै समै सुन्दर सबै, रूप कुरूप न कोइ ।
मन की रुचि जेती जितै, तित तेती रुचि होइ । (बिहारी)
(ट) इक भीजै, चहलै परै, बूढ़ै बहै हजार ।
किते न औगुन जग करै, बै नै चढ़ती बार ॥ (बिहारी)

सेवा में बहुमूल्य भेंट वे, कई रंग के लाते हैं ।

(८) छन्द कितने प्रकार के हैं । उनके भेद सोदाहरण लिखिये ।

(९) वर्ण-क्रम और मात्रिक-क्रम से क्या अभिप्राय है । उदाहरण देकर अपना उत्तर स्पष्ट कीजिए ।

(१०) गुरु और लघु अक्षर का क्या लक्षण है ? उदाहरण देकर समझाइए ?

परिशिष्ट २

परिशिष्ट १ में दिए पहले और दूसरे प्रश्नों के उत्तर इस परिशिष्ट में देखिए ।

प्रश्न	॥	(क) मालिनी छन्द
॥	॥	(ख) ॥
॥	॥	(ग) मन्दाक्रान्ता
॥	॥	(घ) ॥
॥	॥	(ङ) द्रुतविलम्बित छन्द
॥	॥	(च) मालिनी छन्द
॥	॥	(छ) मन्दाक्रान्ता
॥	॥	(ज) द्रुतविलम्बित
॥	॥	(झ) वसन्त तिलका
॥	॥	(ञ) वंशस्थ छन्द
॥	॥	(ट) मालिनी छन्द
॥	॥	(ठ) शादूल विक्रीडित
॥	॥	(ड) ॥
॥	॥	(ढ) मन्दाक्रान्ता
॥	॥	(ण) द्रुतविलम्बित
॥	॥	(त) शादूलविक्रीडित
॥	॥	(थ) मालिनी
॥	॥	(द) वसन्त तिलका
॥	॥	(ध) ॥

- ,, ,, (न) द्रुतविलम्बित
 ,, ,, (प) शिखरिणी
 ,, ,, (फ) वंशस्थ
 प्रश्न १ (ब) वसन्ततिलका छन्द
 ,, ,, (भ) वंशस्थ
 ,, ,, (म) ,,
 ,, ,, (य) द्रुतविलम्बित
 ,, ,, (र) मंदाक्रांता
 ,, ,, (ल) वसंत तिलका छन्द
 ,, ,, (व) मन्दाक्रांता छन्द
 ,, ,, (श) शार्दूल विक्रीडित छन्द
 ,, ,, (ष) द्रुताविलम्बित
 ,, ,, (स) मालिनी छन्द
 ,, ,, (ह) वंशस्थ
 ,, ' (च) द्रुतविलम्बित
 ,, ,, (त्र) वंशस्थ छन्द
 ,, ,, (ज्ञ) वसंत तिलका
 प्रश्न २ (क) मात्रिक छन्द, रोला ।
 ,, ,, (ख) मात्रिक छन्द, सार ।
 ,, ,, (ग) वर्णिक छन्द, इन्द्रवज्रा ।
 ,, ,, (घ) वर्णिक छन्द, दोधक ।
 ,, ,, (ङ) मात्रिक छन्द, चौपाई ।
 ,, ,, (च) मात्रिक छन्द गीतिका ।
 ,, ,, (छ) मात्रिक छन्द, हरिगीतिका ।
 ,, ,, (ज) मात्रिक छन्द, ताटङ्क ।
 ,, ,, (झ) मात्रिक छन्द, चवपैया ।
 ,, ,, (ञ) ,, ,, दोहा ।
 ,, ,, (ट) ,, ,, ,,

